# बाईसवीं सदी

राहुल सांकृत्यायन



प्रकाशक
साहित्य-सेवक-संघ
छपरा

प्रकाशक
ठाकुर अच्युतानन्द सिंह, "अतरसनी"
साहित्य-सेवक-संघ, छपरा


पहला संस्करण १९३१ ई०
दूसरा परिवर्तित संस्करण
१९३५ ई०

मुद्रक
महेन्द्रनाथ पाण्डेय
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद

प्रथम संस्करणसे

## दो शब्द

सन् १९१८ ई० का अप्रैल या मईका महीना था। रात्रिके शेष प्रहर-में विश्वबन्धुका यह भ्रमण-वृत्तान्त, स्वप्न और जाग्रत दोनो अवस्थाओं-मेंसे नही कहा जा सकता किस अवस्थामें, दृष्टि-गोचर हुआ। उसी समय क्रमानुसार इसका एक सक्षिप्त विवरण लिख लिया गया था। किन्तु समया-भावसे उसे विस्तार-पूर्वक प्रकाशनोपयोगी न किया जा सका था। किन्तु वह सक्षिप्त विवरण एक मित्रकी असावधानीसे खो गया। कितने ही समय तक प्रतीक्षा करनेपर भी जब उसके मिलनेकी आशा बिल्कुल न रही, तब, स्मृतिसे जहाँ तक हो सका, बहुत संक्षेपमें यह निबन्ध हजारीबाग जेलमें ९-२-२४ से लिखा गया। यद्यपि मूल अशोमें कोई परिवर्तन नही हुआ होगा, किन्तु बाहरी बातोमें अनेक हेरफेर होना बिल्कुल सम्भव है।

किस अभिप्रायसे यह पुस्तक लिखी गई, एव कहाँ तक इसमे सफलता हुई, यह पाठको ही पर छोड़ा जाता है।

विनम्र—रा० सा०

## द्वितीय संस्करण

बाईसवीं सदी १९२४ ई० में लिखी गई थी। इसके प्रथम संस्करणके समय (१९३१ ई० में) कितने ही स्थानोपर परिवर्तनकी जरूरत जान पळी, किन्तु, लेखकने कई कारणोसे वैसा करना नही चाहा। अबकी बार इस दूसरे सस्करणमे वे सशोधन कर दिये गये है।

इस छोटी पुस्तकमे साम्यवादी ससारका शब्द-चित्र खीचा गया है, उसके पक्ष-विपक्षमे यहाँ कुछ कहनेकी जरूरत नही है। साम्यवादपर तुलनात्मक विचारके लिये लेखककी नई पुस्तक 'साम्यवाद ही क्यो ?' देखनी चाहिए।

*प्रयाग*
१६-१-३५

*राहुल सांकृत्यायन*

१

## लम्बी नींदका अन्त

ओह, इतना परिवर्त्तन ! यहाँ इतने मोटे-मोटे वृक्ष पहले कहाँ थे ? यह बळी चट्टान भी तो यहाँ नही थी। तब यह आई कहाँसे ? हाँ, उस शिखरसे टूटकर आई मालुम पळती है; लेकिन इस ऊँची चट्टानके बीचमें आजानेसे यह बागमतीमे नही गिर सकी। पर वहाँसे आई कैसे, राहमे बळे-बळे वृक्ष जो है ! ज्ञात होता है, ये वृक्ष पीछे उगे है। और ये आकृतिसे सौ वर्ष पुराने मालूम होते है। तो क्या मेरे आये इतने दिन हो गये—ओह-हो ! हाँ, मुझे स्मरण हो रहा है, मै फर्वरी १९२४ में यहाँ आया था। यदि तबसे १०० वर्ष बीते, तो अब २०२४ होना चाहिये !

ओह ! अब यहाँसे उतरना भी मुश्किल है। बागमती हाथो नीचे चली गई। यहाँ वह किनारे वाली चट्टान भी नही है। जिस खुट्टीसे चढ़-

कर मैं यहाँ आया था, वह भी पानीके बहनेसे नाली-सी हो गई । किन्तु, हाँ, पर्वतराजका यौवन तो और भी बढ़ गया है । चारो ओर हरियाली-ही-हरियाली उग आई है । और झरना !—अरे, यह तो एक छोटा-सा प्रपात ही हो गया ! वाह-वाह ! इधर तो और भी कई झरने आस-पास दिखाई देते हैं । पर बागमतीका 'कल-कल' तो वही है । दो-एक चट्टानोंके हटने और कुछ नीचे चले जानेके अतिरिक्त इसमें और कोई हेर-फेर नही हुआ है । किन्तु, पहलेका वह किनारेवाला वृक्ष नही दीख पळता ! सचमुच मेरे परिचित एक भी वृक्ष यहाँ नही हैं । जब यहाँ इतना परिवर्त्तन है, तो बस्तियोंमें, न जानें, क्या हुआ होगा ? बळा कौतूहल हो रहा है । देखना चाहिये, मानव-ससारने क्या-क्या रूप बदले हैं । रास्ता भीमफेरी होकर गया था । वहाँ कुछ लोग जरूर होंगे । उनसे भी कुछ पता लगेगा ।

यह विचारते हुए मैंने अपनी चिर-सहयोगिनी गुफासे बिदा ली । ३५-३६ हाथ ऊपरकी अपनी गुफासे नीचे आनेमें मुझे बळी कठिनाई मालुम हुई । अरे ! मेरे कपळेका पता नही—वह कब सळ-गल गया ? आदमियोमें जाना है—बदन ढाँकनेके लिए वस्त्र तो नितान्त आवश्यक है । यह विचारकर मैंने झट एक वृक्षसे बळे-बळे पत्ते तोळ, जंगली बेलसे कमरमें बाँध लिये । नीचे आनेपर नदीके किनारे-किनारे चलना ही मुझे उचित मालुम हुआ । क्योकि मुझे सन्देह होने लगा कि वह नजदीक-वाला मार्ग साफ है या नहीं । गंगा-किनारे आते ही मेरी इच्छा पहले स्नान करनेकी हुई । सूर्यकी धूप यद्यपि सामने पळ रही थी, दिन भी

दो-तीन घंटे चढ आया था, लेकिन अभी थोळी पहाळी सरदी पळ ही रही थी। तो भी मैंने खूब मल-मलकर स्नान किया। नहा-धो चुकनेपर सामने कुछ परिचित फल लगें दिखाई पळे। मैने उन्हे तोळकर खूब मतलब-भर खाया। इस तरह पेट-पूजासे निश्चिन्त हो, कदम आगे बढ़ाया।

जब पहले यहाँ आया था, तभी ६०-६१ वर्षका हो चुका था, बाल बहुत-से पक गये थे; लेकिन अब तो ये सर्वथा सन-जैसे श्वेत हो गये थे। चिर-काल तक निराहार रहनेसे शरीर सूख गया था, किन्तु, उत्साह और फुर्ती अब भी कम नही थी। चलते-चलते चार-पाँच घटे हो गये। प्राय. छ-सात कोस चलपाया होगा कि ऊपरसे तार जाते दिखाई पळे। धूपमें चमकनेसे मालूम पळा कि तार ताँबेके हैं। ताँबेके तार तब यहाँ दिखाई न पळे थे, इसलिए यह नया परिवर्त्तन मालूम हुआ। मैनें अनुमान किया, शायद इधर कही बिजली पैदा की जाती है, जो इन तारोके द्वारा और जगहोपर जाती होगी। अब आगे, आस-पास, पर्वतों-पर अनार, नारगी और केलेके बाग दोनो तरफ दिखाई पळने लगे। कोसों तक चला आया, पर अभी कोई आदमी दिखाई न पळा। मुझे बगीचोंमें होकर रास्ता जाता मालूम पळा; विचार आया, उससे चलनेपर क्या जाने जल्दी कोई आदमी मिल जाय। मैनें अब नदी-तट छोळ, ऊपरका रास्ता पकळा और नारंगीके वृक्षोंकी छायामें चलना आरम्भ किया। देखा, फल खूब लगे है और वह भी साधारण नही, बहुत बळे-बळे। फिर सौन्दर्यका क्या कहना है? मनमें सोचा, अगर आगे कोई रखवाला

## २

# सेवग्रामका बाग

उस पुरुषने धीरे-धीरे मेरे पास आ, स्वागत कहा। यद्यपि उसने मुझसे एक ही बार यह शब्द कहा, लेकिन मेरे कानो में, न जाने कितनी बार, उसकी आवृत्ति होती रही। इसके बाद ही वार्तालाप शुरू हुआ।

"आप कहाँसे आ रहे है ?"

"कही दूरसे तो नही; करीब दो घटे दिन चढ़ा था, तब मैं अपने स्थानसे चला हूँ।"

"अब, " झट घळी देखकर—"तीन बजकर बीस मिनट हो चले है। मुझे क्षमा करेंगे, अगर मेरी बातोमें कुछ ढिठाई हो, क्योंकि आप के दर्शनने ही जिज्ञासा-तरगोंसे हृदयको डाँवाडोल कर दिया है।"

"जो कहना हो, निस्सकोच होकर कहो। मेरे कुतूहल भी कुछ कम नहीं हैं। यद्यपि, इस स्थानसे मेरा निवास बहुत दूर नहीं, लेकिन समयसे कुछ अवश्य है। अच्छा, यह तो बताओ, आज सन्-संवत् क्या है?"

"सन् १००"

"कौनसा सन्?"

"सार्वभौम। आप कौन सन् पूछते हैं?"

"ईसवी।"

"वह है, २१२४।"

"ओ-हो! तो क्या मुझे गुफामें बैठे दो सौ वर्ष हो गये? तभी तो सब जगह परिवर्त्तन-ही-परिवर्त्तन दिखाई पळता है। अच्छा, पूछो जो कुछ पूछना हो।"

"क्या दो सौ वर्ष आपको गुफामे बैठे हो गये? और बैठते समय अवस्था क्या रही होगी?"

"६० वर्ष।"

२६० वर्ष बहुत होते है। मेरी अवस्था अभी ६० वर्षकी है। वृद्ध-पुरमें १०० और १२० वर्षके भीतरके कई पुरुष हैं। किन्तु आपकी अवस्थाका पुरुष अभीतक सुनने में नही आया। यह सब बातें मुझे और भी आश्चर्यमें डाल रही है; साथ ही, बहुत-कुछ पूछनेकी उत्सुकता भी उमळ रही है। किन्तु वहाँ जो मेरे साथी स्त्री-पुरुष हैं, वे भी मुझसे कम उत्सुक नही हैं। इसलिये क्या ही अच्छा हो, अगर उनके सामने ही आप अपनी आत्म-कथा कहे। × × × हाँ, एक बात और। अब

ऐसे वस्त्रोका रवाज नही रहा; अनुचित तो न होगा, यदि आपको पहननेके लिए एक वस्त्र ला दूँ ?"

"नही,कुछ अनुचित नही। इसकी आवश्यकता मैंने भी महसूस की थी।"

उस भद्रपुरुषने, मेरा वाक्य खतम होते ही 'अर्जुन! अर्जुन!' पुकारा; और आवाज सुनते ही एक युवक दौळा आया। उसने स्मित-मुख हो मेरा स्वागतकर अपने साथीसे पूछा—क्या है ?

"यहाँ, इस मकानमें धोती–जोळे रखे होगे। दौळकर उनमेंसे एक यहाँ लाइये.....आपके पहननेके लिए।"

"बहुत अच्छा," कहकर अर्जुन दौळता हुआ गया और दो मिनट-मे निहायत साफ एक धोती ले आया।

मैंने धोती लेकर कहा—"पहली बात तो यह कि चूँकि हमें बातें बहुत करनी हैं, अतः नामसे परिचित होना चाहिये। मेरा नाम विश्वबंधु है और आप अपना नाम बतलाइये।"

"मेरा नाम सुमेध।"

"तो सुमेध जी! सहायताके लिए धन्यवाद।

"नही, वैसी कोई बात नही। अब हम लोगोके जलपानका भी समय होगया है। आप भी थके-माँदे होगे—भूख लग जाना भी स्वाभाविक ही है। अभी चलकर जल-पान करें और इसके बाद आत्म-वृत्तान्तसे हमें कृतार्थ करें।"

"सुमेध! सचमुच तुम्हारे थोळेसे वार्तालापने मुझे बहुत आकृष्ट कर लिया है। इस समय मेरे आनन्दका ठिकाना नही। अच्छा, चलो।"

अब मुझे साथ लेकर सुमेध उस मकानकी ओर चले। इतने में यकायक तोपके गोले-की-सी आवाज हुई। पहले तो मै चौंक गया, पीछे पूछनेपर मालूम हुआ, यह जलपानकी सूचना है। मेरी अनेक जिज्ञासाओंमें एककी और वृद्धि हुई। मैंने देखा, उधरसे वे स्त्री-पुरुष भी— जो काममे लगे थे—काम छोळकर इसी मकानकी ओर चले आ रहे है। मकानके पास जाकर क्या देखता हूँ, साफ पानीके कितने ही नल लगे हुए है। नहानेके लिए साफ जलके टब है। मकान बहुत स्वच्छ हैं। तीन-चार बळे-बळे कमरे है। एक हॉल है, जिसमें डेढ़-दो-सौ आदमी बैठ सकते हं। कमरोमे बहुत-सी कुर्सियां हं।

मेंने बळे हॉलमे देखा, पाँतीसे कुर्सियां और मेज लगे हुए है। मेजों पर एक-एक तश्तरीमें सेब, केले अंगूर आदि कितनेही फल रखे हुए हैं और गिलासोमें भरकर दूध। हम सब स्त्री—पुरुषोंकी सख्या करीब एक-सौ थी। मैंने उतनी ही थालियाँ वहाँ देखकर पहले आश्चर्य किया। क्या स्त्रियाँ भी पुरुषोकी बगल में बैठकर नाश्ता करेंगी ? इतनेहीमें वे सब स्त्री-पुरुष भी आ गये। सबने स्मितमुख हो स्वागत किया। महाशय सुमेधने उन्हे सम्बोधित करके कहा—

"साथियो, हमारे आजके अतिथिको देखकर सबको बळी जिज्ञासा है। फिर हमारे जैसोकी, जिनने एकाध बात सुन ली है उत्सुकताका तो कोई हिसाब नही। इसीलिए मैंने अकेले ही सब सुन लेना अच्छा नही समझा, अभी तो सिर्फ इतना जान पाया हूँ कि हमारे विश्वबधु जी १९२४ से ही, यहाँसे १०–१२ कोसकी दूरीपर जमे हुए थे, जहाँसे आज ही आ रहे हैं।"

इतना सुननेपर नर-नारियोंका कौतूहल और भी उत्तेजित हुआ, पर जलपान करनेका समय बीत रहा था। इसलिए सबने हाथ-मुँह धोकर अपना-अपना आसन ग्रहण किया। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अर्जुनने मेरे जलपानकी थाली परोसनेको धोती ले जाते समय ही कह दिया था। सुमेधने मुझे एक कुर्सीपर बैठाया और पास ही स्वयं भी बैठ गये। उनके समीप ही एक महिला बैठी थी, जो, आगे चलकर मालूम हुआ कि, उनकी साथिन सुमित्रा थी। परोसनेवालोंने अपना काम समाप्तकर, स्वय भी एक-एक आसन ग्रहण किया। अब सबका नाश्ता शुरू हुआ। मैंने भी एक कतरा सेब मुखमें डाला। मुझे उसकी मधुरता और सरसता अद्‌भुत मालूम हुई। मैंने तो उस समय यही समझा कि शायद चिरकालके बाद खानेसे यह इतना स्वादिष्ट मालूम हो रहा है, किन्तु पीछे मालूम हुआ कि, यह वैज्ञानिक रीतिसे फलोंकी खेती होनेका परिणाम है। मुझे अधिक भूखा समझकर कुछ ज्यादा फल दिया गया था। उसमें नारंगीकी भी कुछ फाँकें थीं। नेपालकी नारंगी पहिले भी खाई थी, लेकिन इतनी मधुर और सुस्वादु नहीं। बीजका तो पता ही नहीं था, रेशे भी नदारद। अंगूरोंके दाने बनारसी बेरोंके बराबर थे। मैंने पूछा—"ये अंगूर कहाँके हैं?"

सुमेधने बतलाया—"यहाँसे चार कोसके फासले पर इसका बाग है।"

"क्या नेपालमें भी अंगूर होता है?"

"बहुत। इसको तो सैकड़ों वर्ष हो गये। सारे बिहार, उड़ीसा, आधे बंगाल, काशी और अवध-प्रान्तको यहींसे अंगूर जाता है।"

अब जलपान समाप्त हो गया। सबने हाथ-मुंह धो, एक कमरेकी ओर मुंह किया। वहाँ बहुत-सी कुर्सियाँ पळी थी। सुमेघन मुझे ले-जाकर एक आरामकुर्सीपर बैठाया। मैं तो मन-ही-मन कह रहा था कि ये लोग जरूर मुझे बीसवी सदीका जंगली समझते होगे। और उसमें भी इन्होंने मुझे पत्ते पहने देख लिया है। दूसरे, इनमेंसे किसीको दाढ़ीका भी शौक नही है और मेरे रीछके-से बाल!

मैंने इन लोगोको बागमें काम करते देखा था, इसलिए समझ बैठा था कि ये जरूर मजूर हैं। लेकिन अब उत्सुकता हुई कि पूछूं, इन बागोका मालिक कौन है? पर हिम्मत नही हुई।

---

३

# वर्तमान जगत

"आपकी बाते सुननेके लिए हम सभी बळे उत्सुक हैं।"

"आपसे ज्यादा आपकी बाते जाननेके लिए मै उत्सुक हूँ। सुमेधजी, मेरी कहानी बहुत बळी नही है। उक्त गुफामे आनेसे पूर्व मै बिहार प्रान्तके नालन्दामें रहता था। उस समय वहाँ एक विद्यालय था, जिसमें मैं पहले पढता-पढाता था।"

"ओ-हो! आप नालन्दा विद्यालयके अध्यापक विश्वबन्धु है? सचमुच हम कितने भाग्यशाली है कि आपके दर्शन कर सके! मै भी तीन वर्षसे बीसकी अवस्था तक आपके ही विद्यालयकी गोदमें पला हूँ। वहाँके 'वसुबन्धु-भवनमें' मैंने आपकी प्रस्तर-मूर्त्ति भी देखी है!"

"तो हमारा प्यारा विद्यालय अब भी जीवित है?"

"जीवित ही नहीं, बल्कि आज उस विद्यालयके मुकाबलेमें संसारमें शायद ही कोई दूसरा विद्यालय हो। दर्शन, ज्योतिष, भाषा-विज्ञान, इतिहास और राजनीतिके लिए नालन्दा अद्वितीय है।"

मै जिस समय नालन्दा विद्यालयके उत्कर्षको सुन रहा था, मेरे आनन्दकी सीमा न थी, हृदयमें आनन्दका सिन्धु तरगें मार रहा था। श्रोतागण भी इस परिचयसे बहुत प्रभावित दीख पळे। सब-के-सब मेरी ओर एक ऐसी दृष्टिसे देख रहे थे, जिसमें प्रेम और सम्मानका भाव था। अब मेरी ज्ञातव्य बाते उन्हे मालूम ही हो चुकी थी। मैने उनकी बात जाननेके लिए अपनी राम-कहानीका यो शीघ्र अन्त कर दिया—

"कोई तीस वर्ष तक विद्यालयकी सेवा करनेके बाद मै उत्तराखंड घूमने आया। उस गुफामें, जो यहाँसे १२-१३ कोसपर है, पहुँचकर मुझे मूर्छा या नीद आ गई, और अब तक वही पळा रहा। बस, यही मेरी संक्षिप्त कथा है। अब आप लोग बतलाये, आपकी जन्मभूमि कौन-सी है, क्योकि आपकी भाषा तो नेपाली नही मालूम होती।"

"अब उस नेपाली भाषाको तो आप कही बोली जाती न पायेंगे। हाँ, पुस्तकालयोमें उसकी पुस्तके अवश्य पाई जायँगी। अब सारे भारतवर्षमें एक-ही भाषा बोली जाती है। हम सबका जन्म एक ही जगह नही हुआ है। यद्यपि मेरे पिताका जन्म काठमांडोका था, लेकिन नालन्दा विद्यालयमें शिक्षा समाप्त करनेपर उन्होने गया जिलेके वाक-ग्रामको अपना कार्य्य-क्षेत्र बनाया। मेरा जन्म वहीका है। अभी मेरे पिता जीवित है और आज-कल माताके साथ हजारीबागके वृद्ध-ग्राममें रहते है। उनकी

अवस्था सौ वर्षसे ऊपरकी है। इसी तरह यहाँके हमारे सभी साथियोंके बारेमें समझिये। मेरी साथिन सुमित्राका [पासमें बैठी महिलाकी ओर सकेत करके] जन्म काशीका है, किन्तु इनकी शिक्षा भी नालन्दा विद्यालय-में ही हुई है। विवाहके बाद हम दोनोने यही काम करना निश्चित किया। साथी अर्जुनका जन्म लंकाके अनुराधपुरका है, किन्तु जब यह एक ही वर्षके थे, तो इनके माता-पिता बोध-गयामें आ बसे और इन्होने भी नालन्दामें ही शिक्षा पाई। इनकी साथिन यह प्रतिभा काश्मीर की है, लेकिन शिक्षा इनकी उसी विद्यालयमें हुई है। इसी तरह यहाँ जितने साथी उपस्थित हैं, इनकी सख्या १०० है और इनके जन्म-स्थान भी एक सौसे कुछ ही कम होंगे। हमारे सेवग्राममें पाँच हजारकी आबादी है, जिसमें आधे स्त्री-पुरुष दूसरी जगहके है। बात यह है कि तीन सालकी उम्रमे ही लळके शिक्षाके लिए किसी विद्यालयमें चले जाते है और बीस वर्षकी अवस्थामें शिक्षा समाप्त होने पर उनमेंसे बहुत कम अपने जन्मके गाँवको लौटते हैं। जिनकी जिस विद्या और शिल्पकी ओर रुचि हुई, वे उसी तरहकी बस्तीमे जा बसते हैं।"

"तो जान पळता है अब सभी बातोमें पुराने जमानेसे अन्तर हो गया है। अच्छा, यह तो बताओ, इस समय नेपालका राजा कौन है?"

"नेपालका राजा! 'राजा' शब्द तो अब पुस्तकोकी ही शोभा बढ़ाता है। अब राजा कहाँ?"

"अच्छा, ये बाग किसके हैं?"

"अब तो सभी चीजें राष्ट्रीय है, सिर्फ बाग क्या? यह घर, कुर्सी, पलंग, लळके, स्त्री-पुरुष सब राष्ट्रके हैं।"

"तो राष्ट्रका संचालन कैसे होता है?"

"हमी लोगो द्वारा चुने गये पचोकी पचायतोसे। ग्राम, जिला, प्रान्त, देश, अखिल भूमंडल सबका सचालन इसी तरह होता है।"

"क्या भूमंडलका एक ही राष्ट्र है?"

"हाँ, आज सौ वर्षसे। अच्छा, तो अब हमे आज्ञा दीजिए, हम लोग भी अपना बचा काम समाप्त कर आवे। (घळी देखकर) चार बज गये, पाँच बजे हम लोग यहाँसे चलेगे। मै अभी ग्रामणीको आपके मिलनेकी सूचना देता हूँ। शामको वही विश्राम करना होगा।"

"हाँ, आप लोग अपना काम करें। मै मजेमें यहाँ बैठा हूँ।"

सुमेधके उठते ही सभी लोगोने बागका रास्ता लिया। सुमेधने टेली-फोनकी घटी बजाई। जिसका उत्तर भी तुरन्त मिला। उन्होने चुपकेसे, न जाने क्या, कहा। फिर कुछ सुनकर वह मुझसे बोले—हमारे ग्रामणी देवमित्र आपसे कुछ बात करना चाहते हैं। मै तो अब कामपर जा रहा हूँ। यह कह वह भी कामपर चले गये। मै 'रेडियो-फोनके' पास गया। वहाँ देखता हूँ, एक शीशेपर एक मनुष्यका प्रतिबिम्ब है। मै चकित होकर देखने लगा। वह मेरा प्रतिबिम्ब तो है ही नही; साथ ही वहाँ कोई दूसरा आदमी भी नही; फिर यह कोई चित्र भी तो नही है। मै स्तब्ध और चकित हो रहा था, इतने हीमें उस प्रतिबिम्बका होठ हिला और टेलिफोनसे आवाज आई—"स्वागतम्! मै देवमित्र हूँ। अभी साथी सुमेधने आपके शुभा-गमनकी सूचना दी थी। सबसे बळा काम तो यह है कि अभी आपके चित्र और समाचारको पटना भेज रहा हूँ। वहाँसे छ बजेके भीतर-ही-भीतर

सारे भूमंडलमें आपका चित्र और समाचार पहुँच जायगा। आपके यहाँ आने पर मैं तो स्वागतके लिए हाजिर रहूँगा ही, इस समय आपको अधिक कष्ट नही देना चाहता। आप थके-माँदे होंगे—विश्राम करें।"

मैंने देवमित्रकी बातोको यद्यपि आश्चर्यसे सुना, किन्तु मनको समाधान किया, यह सब विज्ञानके चमत्कार हैं। बहुत दिनके बाद चलनेसे सचमुच मेरे पैरोमें थकावट मालूम होती थी, किन्तु निद्रा नही। अभी लेटनेका विचार करही रहा था, कि खुले किवाळसे दूसरे कमरेमे देखा, एक आलमारीमें, और उसके पासके मेजपर कुछ किताबे है। मेरी उत्सुकताने मुझे पलगकी ओर कदम बढाने न देकर उधर आकृष्ट किया। जाकर देखता हूँ, आलमारीमें बहुत ही सुन्दर जिल्दोसे सज्जित किताबें रखी हुई हैं। पासकी एक कुर्सीपर बैठकर, मैंने मेजसे एक किताब उठाकर देखी। किताबमें मामूलसे कुछ अधिक वजन मालूम हुआ। खोलकर देखा तो चाँदीके रगके-से किसी धातुके पन्ने है। छपाई-सफाई अतीव सुन्दर। मेरे दिलमें इच्छा हुई, देखूँ, कहाँकी छपी है। देखनेपर ज्ञात हुआ, नालंदा प्रेसमें २०२४में छपी है। आज १०० वर्ष छपे हो गये, लेकिन देखनेसे मालूम होती है, बिलकुल अभी प्रेससे आई है! खोलनेपर, उसके पन्ने निहायत बारीक दीख पळे। एक इंचमे प्राय तीन हजार पृष्ठ रहे होगे। मुझे पग-पगपर वर्तमान जगतकी सभी घटनायें आश्चर्य-जनक मालूम होने लगीं। मैंने विचारा, पहले यह देखना चाहिये कि कौन-कौनसी पुस्तकें हैं। मेजपर एक ओर मोटे अक्षरोंमें सूचीपत्र-अंकित एक गुटका देखी। देखनेसे ज्ञात हुआ, इतिहास, वनस्पति-विज्ञान, साहित्य और भूगोल-

सम्बन्धी यहाँ दो-सौ पुस्तकें हैं। भाषाके विचारसे अधिकतर पुस्तकें हिन्दीकी थी। कुछ पुस्तकें सार्वभौम भाषामें भी थी और एक-दो अंग्रेजीकी भी। मैंने जिसे उस समयके लिए सबसे उपयुक्त समझा, वह था—सार्वभौम राष्ट्र-संगठनका इतिहास। उसे उठाकर मैं कुर्सीपर जा बैठा। पुस्तककी छपाई आदि अद्वितीय थी। छपी भी इसी वर्षकी थी। लेखक नालन्दा-विद्यालयके एक इतिहासज्ञ, अध्यापक विश्वामित्र थे। मैंने विचारा, दो-ढाई हजार पृष्ठोंवाली इस पुस्तकका एक घंटेमें पढना मुश्किल है, अत. विषय-सूचीही देख लूँ।

सूची देखनेसे, १९२४के बादकी मोटी-मोटी बाते जो मालूम हुईं, वे यह हैं—ब्रिटिश छत्र-छायामें भारतको स्वराज्य १९४० तक, संयुक्त एशिया राष्ट्र १९९० तक, संयुक्त एशिया-अफ्रिका-आस्ट्रेलिया राष्ट्र २००० तक, सयुक्त यूरोप-अमेरिका राष्ट्र २०१० तक, भूमडलका एक राष्ट्र २०२४ तक। मैंने कहा, देखूँ, आजकल अखिल भूमंडलका राष्ट्रपति कौन है। मैंने इसके लिए पुस्तकका अन्तिम अध्याय देखा; जिसमें नामोंके साथ उन व्यक्तियोंके चित्र, जन्मस्थान और शिक्षास्थान भी दिये गये थे। सम्पूर्ण भूमडलके राष्ट्रपति अगले तीन वर्षोंके लिए श्री दत्त चुने गये हैं, जिनका जन्मस्थान भारत ही है। शिक्षा उन्होंने तक्षशिलामें पाई। अवस्था चौहत्तर वर्षकी है। प्रधान मंत्री ओहारा एक जापानी सज्जन हैं। शिक्षा-मंत्रिणी मोनोलिन एक रूसी महिला, स्वास्थ्य-मंत्री डेविड एक अमेरिकावासी, इसी प्रकार और-और विभागोंके भी मंत्री भिन्न-भिन्न देशोंके लोग हैं। मैंने खूब गौर करके देखा, तो भी वहाँ सेना-मंत्री कोई नहीं दिखाई

पळा। विचारमें आया, कदाचित् छापेकी भूलसे नाम छूट गया हो। भला ऐसा महत्त्वपूर्ण पद रिक्त कैसे रह सकता है? पीछे मैंने देश-देशकी राष्ट्र-सभाओंमें देखा, सभी जगह सेना-मन्त्रीका अभाव था। मैंने अन्तकी शब्दसूची उलटकर देखी, जहाँ सेना, सेनापति, सेना-मन्त्री शब्द आये थे। उन पृष्ठोंके पढ़नेसे ज्ञात हुआ, २०२४ ई० हीमें प्राचीन ससारका यह महत्त्वपूर्ण पद उठा दिया गया। अब न तो सेना कहीं है, न सेनापति ही।

मैंने अभी इतना ही देख पाया था कि इतनेमें सभी लोग कामपरसे चले आये। आते ही सुमेधने मुझे चलनेके लिए कहा। मैं उठ खळा हुआ। मकानसे बाहर जानेपर, केवल किवाळ लगाकर जब सबको ही चलते देखा, तो मैंने पूछा—

"क्या यहाँ कोई नही रहेगा?"

"काम क्या है?"

"चीजोंकी रखवालीके लिए, और नही तो मकानमे क्यों नही ताला लगाकर चलते?"

"तालेको बिजलीके कारखानोमे अनजान आदमीद्वारा भूल-चूकसे पुर्जा छू जानेके डरसे लगाते है। यहाँ किताबोंके छूनेसे कौन मर जायगा? कोई जीव-जन्तु भीतर जाकर कोई चीज खराब न कर दे, इसलिए दर्वाजे तो लगा ही दिये है।"

जानवरका नाम आते ही स्मरण आ गया, कि यहाँ तो पहले बहुत बन्दर थे; पूछा—

"अच्छा, यह तो मालूम हुआ कि अब चोरोकी सम्भावना नही है।

परन्तु, यह तो बताओ, पहले मैंने यहाँ बहुत-से बन्दर रहते देखे थे, अब वे क्या हुए—एक भी नही दीख पळते ?"

"आप यह सौ वर्षसे पूर्वकी बात पूछ रहे है। मैंने पुस्तकोमे पढा है, पहले जिन-जिन स्थानोपर बन्दर बहुत थे, फसलका नुकसान देखकर सरकारने बळे यत्नसे पकळ-पकळकर उनमेंसे बन्दरियोको तो हजारो पिंजळोंवाले घरोमें रख छोळा और बन्दरोको एक टापूमें छोळ दिया। इस प्रकार २०-२५ वर्षके अन्दर सारे बन्दर स्वयं नष्ट हो गये, क्योकि उनकी सन्तान-वृद्धि रुक गई।"

"तो क्या अब बन्दर है ही नही ?"

"कुछ है, जो प्राणि-विद्याके उपयोगके लिए बळे-बळे संग्रहालयोमें रक्खे गये है, जहाँ उनकी सतति आवश्यकताके अनुसार बढाई जाती है। बन्दर ही नही, और भी ऐसे अनेक जीव है, जो अब केवल संग्रहालयोकी ही शोभा बढा रहे है, जिनको कि पहले लोग बळे चावसे पालते थे।"

मैंने स्मरण करके पूछा—"कुत्ते-बिल्ली तो ग्रामोमे है न ?"

"नही, उनसे ग्रामको लाभ क्या ? उनकी जाति भी अब आप संग्रहालयोहीमे पाइयेगा।"

मोटरें सळकपर लगी दिखलाई पळ रही थी, हमने भी बात करते करते उनमें अपना-अपना स्थान ग्रहण किया। एक-एक मोटरमें बीस-बीस आदमियोके बैठनेका खुलासा स्थान था। मैंने पूछा—तोळे हुए फल कहाँ गये ?

"वे तो उसी समय तोळे जाते और मोटरोपर लादे जाते थे। आपके आनेके समय ज्ञात होता है मोटरें बोझा लेकर चली गई थी। यहाँ देर तक

रखकर सुखानेसे तो फलोकी हानि होगी न? इसलिए स्टेशनपर जाते ही, उन्हें चारो ओर बर्फ लगी हुई गाळीमें रखकर मॉंगवाले स्थानोंपर भेज दिया भी गया होगा?"

"तो आपके गाँवमें केवल फल ही पैदा होते है?"

"हाँ, केवल फल; उसमें भी सेबके बगीचे ही ज्यादा है। यही कारण है, कि हमारे ग्रामका नाम ही सेब-ग्राम पळ गया है। हमारे यहाँसे १५ मीलपर नारगी-ग्राम है, जहाँ नारगीके ही बगीचे है। आपने पीछे बागमतीके उस पार केलोका वन देखा होगा।"

"हाँ, देखा था।"

"वह कदली-ग्रामकी हदमे है। वहाँ प्राय· केले-ही-केले उत्पन्न होते है, हमारे ग्राममें थोळा नारगीका भी बागीचा है। आपने जलपानमें जो केला खाया था, वह वहीका था।"

"मैंने सभी फलोमें एक विशेष प्रकारका स्वाद और मिठास पाई। आकृति भी उनकी बळी देखी, क्या इसमे भी कोई बात है?"

"हाँ, अब वनस्पति-विज्ञान आपके समयसे बहुत उन्नत हो गया है। फलोमें विचित्र रूप, रस, गन्ध, आकृति पैदा करना मनुष्यके हाथमें है।"

हमारा वार्तालाप जारी था, मोटरे सर्राटेके साथ आगे भागती जा रही थी। दोनो ओर सळकके किनारे सेबोके बगीचे थे। हमारी सळक यद्यपि कही-कही दस-बीस हाथ ऊँचे-नीचे चली जाती थी, किन्तु वह चढ़ाई-उतराई ऐसी थोळी-थोळी थी, कि मालूम नही पळती थी। दाहिनी ओर बागमती थी और बाँई ओर पर्वत। बागमती कही-कहीं ४०० गज

नीचे है, कहीं इससे कम; किन्तु बगीचा किनारे तक लगता चला गया है। भूमिको एक रस कर दिया गया है। चट्टानें, जो भूमिको ऊभळ-खाभळ बनाती रहीं, या तो ढाँक दी गई हैं या तोळकर गंगामें फेंक दी गई हैं। मुझे मनुष्यकी इस शक्तिको देख आश्चर्य और आनन्द, दोनों होता था।

विचार करते-करते मेरे दिलमें आया, सेब-नारंगीकी फसल सदा तो नही होती। दूसरे दिनोंमें ये लोग क्या काम करते होंगे ? उत्तर पानेसे पहले ही आसपासके बागोमें छोटे-छोटे फल लगे दिखाई पळे। मैंने पूछा—यह क्या किसी दूसरी जातिके सेब है, जो इतने छोटे है ?

"जातिमें भेद तो अवश्य है, किन्तु कदमें नही। ये तो बढकर उनसे भी बळे और लाल होते है, इनकी फसल अभी दो मास मे तैयार होगी। हमारे यहाँ तो फसल बराबर ही लगती और टूटती रहती है।"

अभी यह बात हो ही रही थी कि मोटरें रेलकी सळक पारकर गईं। मैंने पूछा—यह रेल कहाँ जाती है ?

"यह चन्द्रागढी होती हुई काठमाडो और वहाँसे और आगे बहुत जगह तक फैली हुई है।"

मैंने आश्चर्यसे पूछा, क्या रेल इन पहाळोंपर चली गई। मैंने तो उस समय चन्द्रागढ़ीपर बोझे ढोनेके लिए, 'रोप-लाइन'का प्रबन्ध होते देखा था। उस समय उसके लिए फर्पिंगके बिजली-घरसे बिजलीके खम्भे गळ गये थे।

"अब तो फर्पिंगमें वैसा कोई बिजलीका कारखाना नही है। मैंने भी पढ़ा है, पहले नेपालमें चन्द्र शमशेर नामका एक राजा था, उसने अपने

देशको लाभ पहुँचानेके लिए ही वहाँ एक बिजलीका कारखाना बनवाया था, किन्तु, आज डेढ़ सौ वर्षोंसे भी ऊपर हुए, वह बन्द कर दिया गया।"

"क्या मालूम है, क्यों बन्द कर दिया गया?"

"वहाँ आसपासके पहाळी झरनोंके पानीको एक तालाबमें जमा कर उससे बिजली तैयार की जाती थी, यद्यपि इससे कुछ बिजली तय्यार होती थी, जो शायद उस समयके खर्चके लिए पर्याप्त भी समझी जाती हो, किन्तु झरनोके पानीका इस प्रकार विनियोग करनेसे, फर्पिंगके आसपासके पर्वत सूखते चले गये। चन्द्रने अच्छे ही विचारसे इन दोनो कामोको क्यो न किया हो—"

"दूसरा काम कौन-सा?"

"दूसरा काम पहाळो और आसपासके जंगलोको काटकर खेत बनवा डालना।"

"उससे हानि क्या थी?"

"उससे भी पहाळ धीरे-धीरे सूख चले—वृष्टि कम होने लगी। आखिर पचास वर्षके भीतर-ही-भीतर पानीके अभावसे उन खेतोको छोळकर लोगोको भाग जाना पळा।"

"तो क्या उस कारखानेको बन्द कर कुछ फायदा पहुँचाया गया?"

"हाँ, बहुत। अगर आप अब जाकर देखें, तो फर्पिंगके आसपासके पर्वत रम्य उद्यानोसे हरे-भरे मिलेंगे। चारो तरफ सेब, नास्पाती, अंगूर और अनारके बाग लहलहाते पायेंगे। ये सब फल वहाँ होते भी है बहुत बळे और मीठे। इस तरह बगीचोका जंगल लग जानेसे पहलेसे अब कई गुना

ज्यादा लाभ है। पहाळ फिर तर हो गये है; झरने भी बहुत हैं।"

"तब तो, सभी जगह भारी क्रान्ति हो गई! अच्छा, अब शायद आपका गाँव भी करीब है। वही मकान तो दिखाई दे रहे हैं?"

"हाँ, वही, किन्तु अभी तीन मील है—यही दस मिनटका रास्ता।"

"क्या आपने नेपालकी सैर की है?"

"हाँ, बहुत। मेरा वार्षिक विश्राम बहुधा वहाँ और तिब्बतकी सैर हीमें कटा है। मुझे तीस वर्ष यहाँ रहते हो गये। प्रति वर्ष दो मासका विश्राम मिलता है। मैंने १०-१२ छुट्टियाँ वहाँकी ही यात्रामे बिताई है। भौगोलिक और आर्थिक दृष्टिसे भी मैंने वहाँके विषयमे बहुत विचार किया है।"

इस पुरुषकी इस प्रकारकी बातें सुनकर मुझे और भी आश्चर्य होता था। बीसवी शताब्दीमे ऐसा पुरुष किसी अच्छे कालेजका प्रोफेसर होता। किन्तु आज यह सामान्य जनोमे है। क्या विद्याकी कदर कम हो गई, या विद्वत्ताका मान ऊँचा हो गया? मैंने पूछा—आपके इस ज्ञानसे औरोको भी कुछ लाभ पहुँचता है?

"क्यो नही? हमे ड्यूटी तो ३ घटे ही बजानी होती है। बाकी समयमे करते ही क्या हैं? मैंने कई बार अपने परिशीलित विषयपर यहाँ व्याख्यान दिया है, छुट्टियोके समय दूसरे प्रान्तो या देशोमें जानेपर भी वहाँ व्याख्यान-द्वारा लोगोको लाभ पहुँचाता हूँ। मासिक पत्रोमें भी चर्चा करता हूँ।"

"अच्छा, यह तो हुआ; भला यह तो बताओ, नेपाल क्या-क्या चीजें पैदा करता है?"

"खनिज पदार्थोंमें यहाँ ताँबा, लोहा और सीसा बहुत ही अधिक

होता है। अपने यहाँ काम चलानेके लिए कोयला भी निकल आता था, किन्तु अब बिजलीका उपयोग अधिक होनेसे कोयलेकी उतनी बळी आवश्यकता नही रही। बिहार और युक्त-प्रान्त तक यहाँसे बिजली जाती है और यह बिजली तैयार होती है कई नदियोके जल-प्रपातसे। यह रेल भी उसी बिजलीसे चलाई जाती है। फिर उसीसे हमारी मोटरें चल रही हैं। इसके अतिरिक्त नेपाल मेवोकी खान है। करोळो भेळ और बहुत-से कम्बल-के कारखाने भी यहाँ है। आधेसे अधिक भारतवर्षको गर्म कपळे नेपाल ही देता है।"

"तो ज्ञात होता है, यहाँ चावल-गेहूँ नहीं होता।"

"नहीं, ये सब चीजे और प्रान्तोसे आती है। आज-कल जो वस्तु जहाँ अच्छी हो सकती है, वही वहाँ पैदा की जाती है। प्राय एक गाँव एक ही चीज पैदा करता भी है। वहाँ जरूरतकी दूसरी-दूसरी चीजें और जगहोसे पहुँचती है।"

अब हम गाँवके पहले घरके पास पहुँच रहे थे। मैने देखा, वही पुरुष, जिसके प्रतिबिम्बको मैने टेलीफोनमे देखा था, मेरे स्वागतके लिए कुछ और आदमियोके साथ खळा है। स्वागत हुआ।

मैने देखा कि सभी स्त्री-पुरुष सुन्दर और स्वच्छ है। सळकके किनारे सुन्दर मकानोकी कतारे है। सभी मकान एक-से तथा बिना कोठेके है। मुझे यह एक बिलकुल नई दुनियाँ मालूम होने लगी। अभी मै इन बातोपर कुछ विचार ही रहा था, कि देवमित्रने मुझसे कहा—इस रास्ते।

मैं पीछे हो लिया। मेरे साथ वे सभी स्त्री-पुरुष भी शामिल थे। अब

साढ़े पाँच बज चुके थे। जिस मकानकी ओर हम जा रहे थे, मैंने देखा, उसपर मोटे अक्षरोंमें लिखा हुआ है—'अतिथि-विश्राम'। ग्रामणी महाशयने पहुँचते ही वहाँपर उपस्थित एक भद्र पुरुषसे पूछा—साथी देव! कौन-सा कमरा आजके मेहमानके विश्रामके लिए ठीक हुआ है? देवने कहा, यही पाँचवाँ कमरा तो। अभी कमरेके द्वारपर ही हम पहुँचे थे कि बगलवाले कमरेसे एक दूसरे सज्जन निकल आये, जिनकी अवस्था सत्तर और अस्सीके बीचकी होगी। उन्होंने भी स्वागत किया। अब हम लोग कमरेमें दाखिल हुए। ग्रामणी महाशयने कहा—

"इस समय हमलोग आपको अधिक कष्ट न देंगे। आप मार्गके थके-माँदे हैं। थोळी देर विश्राम करें। आठ बजे भोजन हो चुकनेपर आपके दर्शनके लिए उत्सुक सभी ग्रामवासी संस्थागारमें एकत्रित होंगे। मुझे तो आप जानते ही हैं। मैं आज-कल यहाँका ग्रामणी (ग्राम-सभाका सभापति) हूँ। ये दूसरे बीस भद्र पुरुष और महिलायें ग्राम-सभाके सभ्य हैं। यह दूसरे अतिथि विश्वामित्र, नालंदा विद्यालयमें इतिहासके अध्यापक हैं। कुछ ऐतिहासिक खोजके सम्बन्धमें तिब्बत गये थे, जहाँसे आज ही विमानसे यहाँ आये हैं। पीछे बात करनेपर आपको इनसे और बातोंकी जानकारी होगी। यह साथी देव हैं।"

थोळी ही देरमें और लोग मुझसे बिदा माँगकर चले गये। देवने झट बिजलीकी रोशनी की, क्योंकि अब सूर्यास्त हो गया था। पहाळी सर्दी भीनी-भीनी लग रही थी। यद्यपि मार्गमें सुमेधाने मुझे एक ऊनी लबादा दे दिया था, पर वह पर्याप्त नहीं था। देवने तापकको खोल दिया, और

थोळी देरमें कमरा गर्म हो गया। में एक कुर्सीपर बैठा और विश्वामित्रसे भी कहा कि यदि कोई अन्य आवश्यक कार्य न हो तो बैठ जाइये। वह दूसरी कुर्सीपर बैठ गये।

बागमें जो ऐतिहासिक ग्रंथ देखा था, उसके रचयिताके नामसे यद्यपि मुझे निश्चित-सा हो गया था, कि यह वही विश्वामित्र है, तो भी मैंने पूछा—क्या आप 'सार्वभौम राष्ट्रके सगठनका इतिहास'के लेखक अध्यापक विश्वामित्र हैं?

उन्होने नम्रता-पूर्वक कहा—"हाँ, वही।"

"तो मुझे आपकी मुलाकातसे बहुत प्रसन्नता हुई।"

"उससे कही अधिक मेरा भाग्योदय हुआ। हमारा नालन्दा-परिवार आपको सदा याद रखता है। आपने जो बीज वहाँ बोया था, उसे देखकर आज आप प्रसन्न होगे। आपके और ग्रामणी महाशयके वार्तालापके बाद ही आपके शुभागमनकी मुझे खबर लग गई थी। वहाँ सारा विद्यालय-परिवार बळा उत्सुक है। हमारे आचार्य वशिष्ठने अभी मुझसे कहा है कि, सबसे प्रथम आपके दर्शनोका अधिकारी नालन्दा-परिवार है।"

"आपने क्या टेलीफोन-द्वारा यह वृत्तान्त जाना है?"

"हाँ। अभी तो पुस्तकालयमे टेलीफोनपर बात ही कर रहा था। आपके इस जगह आनेका समाचार भी उन्हे मैंने दे दिया। उन्होने कहा है, यदि कष्ट न हो, तो इसी समय वार्तालाप और दर्शन देनेके लिए कहूँ।"

"नही, कुछ नही। मुझे कुछ भी कष्ट नही है। कौन पैदल आया हूँ! चलो, चले। यह मेरे लिए कम आनन्दका विषय नही है।" यह कह, हम दोनो उठकर पुस्तकालयमें गये। यह सौ-डेढ़ सौ आदमियोके बैठने लायक

एक खुला हाल है। दो आलमारियाँ किताबोंकी हैं। बिजलीकी रोशनी जल रही है। बीचमें बड़े-बड़े मेज और बैठनेके लिए बहुत-सी कुर्सियाँ पड़ी हैं। विश्वामित्रने जाकर टेलीफोनमें घंटी दी। मैं वहाँ ही कुर्सीपर बैठ गया। वह कुछ क्षणके बाद मुझसे बोले—"हमारे, आचार्य आपकी प्रतीक्षामें खड़े हैं।"

मैंने जाकर देखा, शीशेमें एक वृद्ध पुरुषका प्रतिबिम्ब है। प्रतिबिम्बने होठ हिलाकर सिर झुकाया और टेलीफोनसे आवाज आई—'स्वागतम्'। मैंने भी शिर झुकाकर उत्तर दिया।

विश्वामित्रने कहा, यही हमारे आचार्य हैं। आप सत्तर वर्षसे विद्यालयकी सेवा कर रहे हैं, जिसमें बीस वर्षसे आप आचार्यके पदपर वर्तमान हैं।

मैंने कहा—वशिष्ठजी, आपके मिलनेसे मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई। वास्तवमें आप सब धन्य हैं, जो इस प्रकार अनवरत विद्या-दान द्वारा जगत्का उपकार कर रहे हैं।

"यह हमारा कर्तव्य है।.. हाँ, नालदा-परिवारकी ओरसे मेरी प्रार्थना है, कि अन्यत्र कहीका निमंत्रण स्वीकार करनेसे पूर्व, पहले अपने विद्यालयमें पधारें।"

"यह मेरी स्वयं ही इच्छा है, इसके विषयमें और कुछ कहना न होगा। मैं यहाँसे सीधे वहाँ ही आऊँगा।"

"अध्यापक विश्वामित्र आपकी सेवामें हैं ही, यह भी खुशीकी बात है। वह अब विद्यालयको लौट रहे हैं; उन्हींके साथ पधारें। आपका शरीर अत्यन्त कृश है। इसलिए हमारा यह आग्रह नहीं, कि आप तुरत आवें।"

"मैं अवश्य यहाँसे वहाँ ही आता हूँ। सभी बालक-बालिकाओं, और अध्यापक-अध्यापिका-परिवारसे मेरी मंगल-कामना कहे।"

"यहाँ शब्दप्रसारकसे सभी सुन रहे हैं। अच्छा, तो अब आप विश्राम करें।"

इस वार्तालापने एक अद्भुत आनन्द मेरे हृदयमें पैदा कर दिया। मैं विश्वामित्रका हाथ पकळे वहाँसे अपने कमरेमें आया। मैंने कहा—

"विश्वामित्र! मेरे समयके और अबके संसारमें बळा फर्क है। तुम तो इतिहासके अध्यापक ही हो—इन बातोको जानते हो। किन्तु यह मुझे अधिक आश्चर्यमय इसलिए मालूम होता है, कि मैंने दो सौ वर्षोंके पूर्वका संसार इन्ही आँखोंसे देखा था। मुझे वे बाते कलकी-सी दीख पळती है। उस समय समानताकी धीमी-सी आवाज उठी थी; किन्तु यह रूप-रेखा स्वप्नमें भी कहाँ मालूम होती थी? मैं आज ही तुम्हारे संसारमें आया हूँ। अभी तो मैंने इसका शतांश भी देख-समझ न पाया। किन्तु, इतनेहीमें आश्चर्य-समुद्रमें डूब रहा हूँ। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हो रही है कि तुम्हारे संसारने अनेक अंशोमें आशातीत उन्नति की है।"

---

४

# विद्यालयके विषयमें

"अच्छा, यह तो बताओ, नालन्दा विद्यालयकी इस समय क्या स्थिति है?"

"अब नालन्दा बहुत विशाल विद्यालय है। पुराने बळगाँवसे राजगृह तक विद्यालयके ही भवन और छात्रालय चले गये हैं। सारे भूमडलमें दर्शन और इतिहासके लिए ऐसा दूसरा विद्यालय नही । वहाँ अध्ययनके लिए यूरोप, अमेरिका, जापान, अफ्रिका, आस्ट्रेलिया सभी जगहोंसे विद्यार्थी आते हैं। प्राचीन वस्तुओंका संसारमें सबसे बळा संग्रहालय यहीपर है। प्राचीन लिपियो और भाषाओके पढ़ने-पढानेका यहाँ सर्वोत्तम प्रबन्ध है। 'सार्वभौम राष्ट्र परिषद्'की आज्ञासे, सिर्फ भारतकी इतिहास-विषयक सामग्री ही नही, बल्कि रोम, यवन, मिश्र, असुर कल्दान, मेक्सिको आदिके

विषयकी कितनी ही सामग्रियाँ यहाँ सगृहीत हुई हैं। नालन्दाको अभिमान है कि उसने अन्तर्राष्ट्रीय इतिहासके प्रस्तुत करनेमें बळी सहायता की है। दर्शनका अध्ययन नालन्दामें उत्तम रीतिसे होता है। नव्य, प्राचीन, पौरस्त्य, पाश्चात्य सभी दर्शनोंके अध्ययनका प्रबध है। हमारे आचार्य दर्शनके महान् विद्वान है। सस्कृत, पाली, जन्द, प्राकृत, यवनानी, लातीनी (रोमक) इत्यादि बहुत भाषाओके यहाँ अध्यापक हैं। भाषाओके अध्ययनमें अब सचमुच बळी क्रान्ति हो गई है। प्रत्येक भाषाके अध्ययनके उपयुक्त वातावरण बना हुआ है। विशेष-विशेष भाषाओंके जिज्ञासुओको यहाँ रख कर एक प्रकारमे दूसरी भाषासे उनका नाता ही तुळवा दिया जाता है। उनका सभी समालाप उसी भाषामे होता है। वस्तुओका नाम आदि अध्यापकगण आकृति-प्रदर्शन पूर्वक उसी भाषामे बतलाते है। इस प्रकार तीन वर्षमें छात्रोका उस भाषापर अधिकार हो जाता है। इसके अतिरिक्त ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन भी भारतमे सबसे अच्छा यहाँ होता है। राजगृहके वैभार-गिरिपर यहाँकी महान् वेध-शाला है। ज्योतिष-साहित्यकी वृद्धिमें भी हमारे विद्यालयने भाग लिया है। भारतके 'नालन्दा' और 'तक्षशिला'के विद्यालय भूमडलके प्रमुख विद्यापीठोमेसे है। 'तक्षशिला'ने आयुर्वेद, वनस्पति, प्राणि आदि शास्त्रोमें बळी कीर्ति अर्जित की है।"

"पठन-काल विद्यालयमे क्या है ? नियम तथा परीक्षा-क्रम कैसा है ?"

"१७ वर्षका अध्ययन तो सबहीके लिए अनिवार्य है। यह नियम भारतके ही नही, सारे भूमडलके विद्यालयोंके लिए एक-सा है। तीसरे वर्ष बालक माता-पितासे ले लिया जाता है। उसके बाद ६ वर्ष तक शिशु-कक्षा,

से १४ तक बाल-कक्षा और १४ से २० तक युवक-कक्षामें शिक्षा पाता है। साधारणतया यही पढ़ाई समाप्त हो जाती है। इसके बाद लड़के अपनी प्रवृत्ति और योग्यताके अनुसार भिन्न-भिन्न व्यवसायोमें लग जाते हैं। किन्तु, जिनकी प्रवृत्ति विद्या-व्यवसायमें देखी जाती है, उन्हे अपने विषयमें योग्यता बढानेका और भी अवसर दिया जाता है। यह समय प्राय: ४ से ६ वर्ष तकका है। किन्तु इसमें अवधि नही है। इसके बाद भी अध्ययन करते उन्हे आगे बढनेका पूर्ण अवसर प्राप्त है।"

इस प्रकार अनेक विषयोपर हमारा वार्तालाप चलता रहा। मैंने सक्षेपसे ही कुछ अंश यहाँ दिया है। अभी बात चल ही रही थी कि आठ बजनेका समय हो गया। इसी बीचमें अतिथिशालाकी श्री पद्मावतीने आकर अभिवादन कर लिया था, किन्तु हमारी गम्भीर बात छिडी देख वे और कुछ बोलना उचित न समझ, चली गई थी। अब फिर उन्होंने आकर सूचित किया कि आठ बजनेवाले है। भोजनका गोला दगनेवाला है। चलनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए।

५

# बीसवीं सदी

इसपर मैंने विश्वामित्रसे पूछा—"यह गोला क्यों दगता है?"

"बात यह है, कि हर आदमीके पास घळी रखनेकी फजूल-खर्ची राष्ट्रने उचित नही समझी। इसीलिए समयकी सूचना इस प्रकार दी जाती है। दिन-रातमे जलपान और भोजनके लिए चार समय है—सबेरे सात बजे प्रातराश, ग्यारह बजे दोपहरको मध्याह्न भोजन, तीन-साढ़े तीन बजे जलपान और फिर रात्रिमे आठ बजे ब्यालू। इन चारों समयोंपर तथा प्रात. जागनेके समय तोपका गोला छोळा जाता है।"

"किन्तु, मैंने बागमें सुमेधजीके पास तो घळी देखी थी?"

"हाँ, बाहर कामपर जानेवालोंमें एक मुख्य पुरुषके पास घळी रहती

है, सबके पास नहीं। अच्छा, तो अब हमें चलना है। यह लीजिये, गोला भी—अररर-धम्।"

हमलोग जल्दी ही वहाँसे निकल पळे। देव, पद्मावती और हम दोनों चार आदमी थे। सळकपर चारों ओर चाँदनीकी भाँति बिजलीकी रोशनी फैल रही थी। सळक प्रशस्त और स्वच्छ थी। उसके दोनों ओर एक समान पक्के मकानोंकी पंक्तियाँ थी। हर एक मकानके सम्मुख सळक तक फूलोंके वृक्ष थे, जो अपनी शोभा और सुगन्धसे चलनेवालोंके चित्तको प्रफुल्लित कर रहे थे। प्रत्येक घरके सामने बरांडा था, जो सौ-सौ घरोंके लिए एक ही था। विश्वामित्रजीने बताया कि प्रत्येक पुरुषके रहनेके लिए तीन-तीन कमरे है, जिनमेंसे सामनेवाला बैठकका कमरा उतना ही बळा है, जितना कि वह कमरा, जिसमेंसे अभी हम आये हैं। इनमें दस कुर्सियाँ आसानीसे बिछाई जा सकती है। पीछेकी ओर चौळाईमें इससे डचोढे, किन्तु लम्बाईमें आधे, दो कमरे हैं—एक सोनेके लिए, और दूसरा स्नानके लिए। यही तीनों कमरे मिलकर एक घर कहलाता है। ऐसेही सौ घरोंकी एक श्रेणी है। हर श्रेणीके लिए एक एक निर्वाचित प्रधान होते है, जो स्वय भी उसी श्रेणीके एक घरमें रहते हैं। मुझे पीछे मालूम हुआ, कि सुमेध ऐसी ही एक श्रेणीके प्रधान हैं। प्रत्येक श्रेणी का एक विस्तृत हाल होता है। जिसमें कुछ पुस्तकें, वाद्य तथा और मनोरंजनकी वस्तुयें रहती है। यहाँ ही टेलीफोन भी लगा रहता है। इस सेब-ग्राममें ऐसी पचीस श्रेणियाँ है।

नर-नारी सळकपर आपसमें वार्तालाप करते चल रहे थे। सबकी बातो-का लक्ष्य मेरी ही ओर दिखाई पळता था। मैंने हजारों नर-नारियोंको

मार्गमें देखा, किन्तु उनमें एक भी बच्चा नहीं दिखलाई पळा। मैंने समझ लिया, तीन वर्षके बाद तो बच्चे ले ही लिये जाते हैं। सर्दीके कारण छोटे बच्चोंको शायद इस समय साथ न ले जाते हो। अब मैंने पासके वृहद् भवन पर मोटे अक्षरोंमें 'भोजनागार' देखा। अपूर्व विद्युच्छटा चारो ओर छिटक रही थी। मकानमें प्रविष्ट होनेके लिए बहुत-से द्वार थे। प्रविष्ट होनेसे पहले लोगोने बराडेमे गर्म जलके नलोसे हाथ धो, लटकते रूमालोसे हाथ पोंछे। फिर भीतर प्रविष्ट हुए। भोजन रखनेकी मेज-कुर्सियाँ वैसी ही थी, जैसी कि बागमें देखी थी। हाल बहुत ही लम्बा-चौळा था। उसमें पाँच सहस्र आदमी आरामसे बैठकर भोजन कर सकते थे। स्वच्छता और भीतरी सुन्दरता अपूर्व थी। रसोई-घर, ज्ञात होता है, उससे पृथक पीछेकी ओर था। मेरे वहाँ पहुँचनेके साथ ही ग्रामणी तथा अन्य पूर्व-परिचित भद्र पुरुष और महिलाये आ गई थी। मुझे एक कुर्सीपर बैठाया गया। मेरी दाहिनी ओर देवमित्र और बाँई ओर विश्वामित्र थे। भोजन पहलेसे परोसकर तैयार रक्खा हुआ था। भोजनके पदार्थोमे रोटी, मास और दो तरकारियाँ थी। एक कटोरीमे हलवा भी था। साथ ही एक तस्तरीमें थोळा फल और एक गिलास जलका रखा था। अभी आकर दो मिनट हमें बैठना पळा, तब घटा टनन्-टनन् हुआ, जिसपर देवमित्रने कहा, अब भोजन आरम्भ होना चाहिए। यह इतनी प्रतीक्षा इसीलिए की जाती है कि भोजन करने वाले सभी आ जायें। मुझे वह भोजन-मंडली बळी विचित्र मालूम होती थी। बीच-बीचमें पुरुषोके साथ स्त्रियाँ भी बैठी निस्संकोच भोजन कर रही थी। मैंने अपने दिलमें कहा, बीसवी शताब्दीके भारतीय ऐसा स्वप्न

कब देख सकते थे। यद्यपि मैंने अभी पूछा नहीं था और देखनेमें शिक्षा, सभ्यता, शुद्धतामें सभी स्त्री-पुरुष उच्च वर्णहीसे ज्ञात होते थे, तो भी मेरे मनमें होता था, कि क्या ये सब ब्राह्मण-क्षत्रिय होंगे। कुछ तो मैंने पहले ही सुना था—अर्जुनके माता-पिता लंका-निवासी थे। यद्यपि वेष-भूषा सबका एक-सा था, किन्तु बहुत से स्त्री-पुरुष यूरोपवालोंकी भाँति गोरे मालूम होते थे। इन सब बातोंसे मेरे दिलमें निश्चित-सा हो गया था, कि 'एक-वर्णमिदं सर्वम्'।

भोजन करके सब लोगोने उठ-उठकर अपने-अपने द्वारसे निकलकर गर्म नलोपर हाथ धोया। मुँह पोछनेके बाद , अब सब लोग वहाँसे चले। पहले ग्रामणीने कहा ही था कि सस्थागारमें जमावळा होगा। अतः वहाँ ही को प्रस्थान किया गया। हाँ, एक बात यह भी देखी कि यद्यपि हाथ-मुँह सबने धोया किन्तु जूतेको किसीने खोलकर पैर नही धोया और न दूसरे कपळोंको भी किसीने उतारा।

अब हम लोग वहाँसे सस्थागारको चले ; यह भव्य भवन थोळी ही दूरपर था।

मकान बहुत ऊँचा, सुन्दर था—बाहरसे बिजलीकी रोशनी जगमगा रही थी। यहाँपर भी मोटे-मोटे अक्षरोमें मुख्य द्वारपर 'संस्थागार' लिखा हुआ था। भीतर प्रविष्ट हुए।

देवमित्रने कहा—"जब तक सब लोग आ जाते हैं, तब तक आप रंगमंचके पिछले कमरेमें बैठें।" जाकर अभी थोळी ही देर वहाँ बैठे होंगे कि इतनेमें रंगमंचसे घंटीका शब्द हुआ, जिसे सुनकर ग्रामणीने

चलनेका संकेत किया। मेरे पहुँचते ही मुझे देखकर सारी आँखें मेरी ओर हो गईं। 'संस्थागार'की अभ्यान्तरिक शोभा अत्यन्त मनोहारिणी थी। रंगमंचपर तरह-तरहके रंगीन चित्र विचित्र और प्रखर विद्युत्प्रदीपोंका प्रकाश था। भवनकी छत बहुत ऊँची थी। बळे-बळे झरोखे लगे हुए थे। विद्युल्लताके प्रकाशसे रातका दिन हो रहा था। यद्यपि सर्दी पळ रही थी, झरोखे और द्वार चारो ओर खुले थे, किन्तु अन्तर्हित तापकयंत्रोंकी गर्मीसे भीतर किसी प्रकारकी सर्दी मालूम नही होती थी। दीवारों और छतोंपर भी बहुत अच्छे रंग-बिरंगे बेल-बूटे बने हुए थे। दीवारोंपर महापुरुषोंके बळे-बळे चित्र लटक रहे थे, जिनमें विचारक कवि सभी प्रकारके पुरुष थे। कही बुद्ध थे, तो कही रूसो, कही मार्क्स तो कही एंजल् ; सुक्रात, प्लेटो, लेनिन, न्यूटन, डेकार्ट आदि अनेक जगन्मान्य पुरुषोके चित्र उस विस्तृत भवनमें शोभा दे रहे थे। बीच-बीचमें बहुत-से सुभाषित टँगे थे।

मैंने जन-समाजकी ओर देखा, वहाँ न कोई कृश था, न मलिन, स्त्री पुरुष सब गद्दीदार बेंचोके ऊपर बैठे थे। उस विस्तृत भवनमें पाँच सहस्र आदमी बैठे होंगे, तो भी पीछेकी ओरकी बेंचोपर और भी दो-एक सहस्र आदमी आसानीसे बैठ सकते थे। इस भवनका उपयोग राजनैतिक, साहित्यिक सभी कामोके लिए होता है। ग्राम-सभाकी बैठकें यहाँ ही होती हैं। मनोरंजनार्थ, बाहरी या अपने यहाँके प्रवीण लोग संगीत और नाटधाभिनय से यही सबको प्रसन्न करते हैं। इतिहास, विज्ञान आदिपर बाहरी या ग्रामके व्याख्याताओके व्याख्यान भी यही होते हैं। अनेक राष्ट्रीय तथा सामाजिक महोत्सव यहीपर मनाये जाते है।

लोगोंके शान्त बैठते ही, देवमित्रने उठकर आजकी सभाका सभापति होनेके लिए श्री इस्माइलका नाम प्रस्तावित किया। प्रस्ताव करते समय उन्होंने कहा—यद्यपि हम सबोंके लिए साथी इस्माइल हृदयसे परिचित हैं, किन्तु आजके अपने श्रद्धेय अतिथिकी जानकारीके लिए इतना कह देना आवश्यक मालूम होता है, कि साथी इस्माइल अनेक बार हमारे ग्रामके ग्रामणी, तथा नेपाल प्रान्तके सभापति रह चुके हैं। यद्यपि आप अभी साठ वर्षके ही हैं, किन्तु गुणोंसे हम सब उन्हें वृद्ध समझते हैं। एक बात और है, जो आजके हमारे अतिथिके सम्बन्धमें उनको समीपतर बनाती है। यही नही कि वह नालन्दा विद्यालयके पुत्र हैं, बल्कि हमारे अतिथिको महापुरुष शफीका नाम स्मरण होगा; आप उसी वैशाली-वासी महापुरुषके पौत्र हैं। आपकी गणना संसारके बळे-बळे राजनीति-विशारदोंमें है। हमारे प्रान्त, विशेषकर हमारे सेव-ग्रामको इनपर अभिमान है, जहाँपर कि शिक्षा-समाप्तिके बादसे ही आप रहते है।

लोगोने करतल-ध्वनि-पूर्वक प्रस्तावको स्वीकृत किया और श्री इस्माइल उठे। वास्तवमें देखने मात्रसे इनके चेहरेपर महापुरुषका तेज झलकता था। यथार्थमें उनको ६० वर्षका युवक कहना चाहिये। इनको ही क्या, ६०-७० वर्षका अबका आदमी बीसवीं शताब्दीके ३५-४० वर्षके हृष्ट-पुष्ट आदमी-सा मालूम होता है। जैसे और बातोंमें आजके संसारने उन्नति की है वैसे ही इस बात में भी। श्री इस्माइलने कहा—

"साथियो ! अनेक ज्ञान-वयोवृद्धोंके सम्मुख मुझे इस सेवाके लिए स्वीकार करनेका कारण आपकी निष्कारण दयाके सिवा और कुछ नहीं

हो सकता। मैं तो ऐसे ही महापुरुषके शुभागमनका सन्देश पा आनन्दसे मस्त हो रहा था। मुझे गर्व है कि मैंने विद्या-द्वारा ही नालन्दामें जन्म नहीं लिया, बल्कि मेरा जन्म भी वहींका है। पितामह, आप लोगोंको विदित है, पूरे डेढ़ सौ वर्षके होकर मरे थे। वे सुनाया करते थे कि कैसी कठिनाइयोंमें नालन्दाका पुनरुद्धार किया गया। जबकि उनकी अवस्था पच्चीस वर्षकी थी, तभी उन्होंने विद्यालयके लिए अपना जीवन-दान दिया, और अन्तमें वहीं अग्नि-समाधिस्थ भी हुए। वह कहते थे कि हमारे साथ अनेक महा-पुरुष उस समय नालन्दाकी सेवा करते थे। उस समय विद्यालयकी भूमिपर थोळी-थोळी दूरपर छोटे-छोटे ग्राम बसे हुए थे। विद्यालयके पुरातन भवनोंके ध्वंसावशेष भीटों-जैसे थे। उस समय बुद्ध-पोखर आदिकी यह शोभा न थी। बळगाँव नामका एक छोटा-सा ग्राम वहाँ था, जहाँ अब भी सूर्यका मन्दिर है। कार्तिककी सूर्य-षष्ठीका मेला अलबत्ता एक दिनका होता था, जिसमें महिलायें ही अधिक सम्मिलित हुआ करती थी। आपको ज्ञात है, उस समय स्वार्थान्धताका साम्राज्य था। पुरुष स्त्रियोंकी शिक्षामें धर्मकी हानि समझते थे। हमारे मुसलमान भाइयोंने धर्मके नामसे स्त्रियोंको जकळबन्द कर रक्खा था, जिसकी देखा-देखी समस्त उत्तरीय भारत स्त्री-जातिका एकान्त कारागार हो गया था। यह बळी भारी कृपा समझिये, जो स्त्रियाँ उस मेलेमें धर्मके सम्बन्धसे जाने पाती थी। यह तो सभीने सुना था कि आचार्य विश्वबन्धु ३० वर्ष तक विद्यालयकी सेवा करके उत्तराखंडको चले गये; और तबसे कुछ पता नही लगा। भला यह किसको आशा थी कि हम लोगोंका ऐसा सौभाग्य उदय होगा। आज तीन पीढ़ियाँ प्रतीक्षा करती चली गईं।

हम सब जब इन बातोंको सुनते थे, तो स्वप्न देखते थे—यदि महापुरुषका फिर दर्शन होता; यदि वह फिर पधारते; तो उन्हें अपने सिर-आँखोंपर रखते। हमलोगोंने स्त्रियोंके ऊपर वह अत्याचार होते जन्मसे ही नहीं देखा। हम लोगोंने तो जन्मसे मनुष्योका ऊँच-नीच होनेका शब्द ही नही सुना। हमने तो धर्मके नामसे कट मरनेकी चर्चा भी न सुन पाई। किन्तु इतिहासमें आपने पढा है—आपके देशका मुख उज्वल करनेवाले अध्यापक विश्वामित्र यही है। इतिहासोमें अब जब हम लोग धर्मके नामपर मार-काट पढ़ते हैं, तो हँसते हैं—वैसे ही हँसते हैं, जैसे एक राजाकी बातके कारण सहस्रों पुरुषोंको पतगोंकी भाँति युद्ध-अग्निमे जलते सुननेपर। जिन्होने उस अन्धकार-युगमें मनुष्य-जातिके कल्याणके लिए भगीरथ-प्रयत्न किया, वे धन्य है। आज महापुरुष विश्वबन्धुकी पवित्र मूर्ति हमारे मध्यमें है। (महापुरुषोंकी तस्वीरोकी ओर इशारा करके) आज हम समझते हैं, ये सारे देवगण मूर्ति-मान, सजीव हमारे मध्यमें है। वास्तवमे क्या हमारे हृदयका भाव, हमारा भक्ति-उद्‌गार वाणी-द्वारा प्रकट किया जा सकता है?

"साथियो! हमारे गाँवका सबसे अधिक सौभाग्य है कि आप पहले यही पधारे। आज वस्तुतः अनिर्वचनीय आनन्दका समुद्र हमारे हृदयोंमें तरंगित हो रहा है। हम पूजनीय महात्माको किस प्रकार पूजें, किस प्रकार स्वागत करें, यह समझमे नही आता। ऐसे अपूर्व महापुरुषके लिए हमारे पास कौन-सा द्रव्य है? अधिक कुछ नहीं, सिर्फ इतना ही—महात्मन्! हम सब आपके कृतज्ञ हैं, आपके ऋणोंका हमसे परिशोध नही हो सकता। साथियो, यद्यपि हम सब लालायित हैं, कि आपके मुँहसे कुछ सुनें; किन्तु,

यह लोभ हमारा बलात्कार होगा। दो सौ साठ वर्षका शरीर, उसमें भी दो सौ वर्षका लम्बा उपवास। अस्तु। अब मैं अधिक आप सबकी ओरसे महात्माकी सेवामें और क्या कह सकता हूँ, सिवाय इसके कि महात्मन्! हम आपके कृतज्ञ हैं, हम आपसे उऋण होने योग्य नहीं।"

मैंने यह सब कथन बळी सावधानीसे सुना। सुनते समय कितने ही अतीत-दृश्य मेरे मानस-नेत्रोंके सम्मुख आते-जाते थे। कथन-समाप्तिके बाद ही मैंने खळे होकर कहा—

"बन्धुओ! मैं जो कुछ देख रहा हूँ, यही एक स्वप्न था, जिसके जागृतमें लानेके लिए लाखोंने अपना जीवन-सर्वस्व अर्पण किया। तुम समझ सकते हो, उस स्वप्नको जीते-जागते देखते हुए मेरे हृदयमें कैसा आनन्द होता होगा। अभी आजके जगतका कितना अंश मैंने देख ही पाया है, किन्तु जो कुछ देखा है, वही क्या कम है? मान लो, आज मैं यदि १९२३के किसी गाँवमें जाता, तो क्या यह सेब-ग्राम मिलता? आपका पाँच हजार की आबादीका यह गाँव है, ऐसे ही ग्रामोंकी उस समयकी अवस्था सुनाता हूँ। मिट्टीके कच्चे मकान, जिनमें कहीं-कहीं मकानकी मिट्टी गिर गई है। कहीं एक कोना खिसक पळा है। फूसकी छत और खपळैल टूटी-फूटी पळी हुई है। दस घरमें शायद दो घर ऐसे होंगे, जिनमें बरसातकी बूँदें भीतर न टपकती हों। जगह-जगह पतली-पतली गलियोंमें कूळा-कर्कट फेंका हुआ है, वहीं नाबदानका पानी बह रहा है। लळके वहीं पाखानेके लिए बैठ जाते हैं। बरसातके दिनोंमें तो और भी सळ-सळ कर कीचळ और दुर्गन्धकी भरमार हो जाती थी। बस्तीके चारों ओर लगे हुए

खेत ही लोगोंके पाखाना जानेकी जगहें थीं। कुत्ते जगह-जगह फिरते रहते थे। किसी प्रकार मुश्किल से, जिस रास्ते से गाळी आ सके, वही उस समयकी सळक थी। आज-कल वे बैल-गाळियाँ और एक्के कहाँ हैं? प्राचीन वस्तुओंके संग्रहालयोंमें उन्हे आप लोगोने देखा होगा। वही उस समयकी सवारी थी। धनी लोग अच्छे-अच्छे घोळोंकी गाळियाँ रखते थे। हाथी भी सवारीके लिए रखे जाते थे। अब तो आपके यहाँ, मोटर ही सवारीके लिए, मोटर ही लादनेके लिए, गाँवके सभी काम मोटर हीसे होते हैं। उस समय यह सभी काम आदमी या बैलगाळीसे होते थे। मैंने भी कई बार रात-रात भर बैलगाळीपर चढकर ८-१० कोसकी यात्रा पूरी की थी।

"हाँ, मै उस ग्रामका वर्णन कर रहा था। बीचमें गाँवकी उसी पतली सळककी दोनो बगल दूकानें होती थी, जिनमें हलवाई बतासे और लड्डू बेचते थे; बजाज कपळे; पसारी रंग मसाले; कोई साग-तरकारी, कोई सूई-धागा, कोई नून-तेल। हफ्तेमें एक या दो दिन बळे हाट लगते थे, जबकि आस-पासके गाँवोसे आवश्यक चीजोको खरीदनेके लिए ज्यादा आदमी आया करते थे। कोई पैसोसे चीजें खरीदता था। कोई अनाजसे बदलता था। दूकानदार इस खरीद-बेंचसे कुछ प्राप्त कर अपना निर्वाह करते थे। लोगोकी अवस्थाकी क्या पूछते हो? आप लोगोको तो उस समय का बळे-से-बळा धनिक भी देखता, तो देवता कहता। पाँच-छः वर्षके लळके चार अंगुल कपळेकी लँगोटी लगाये फिरा करते थे। कुछ धनिकोंको छोळकर, साधारणतया सभी एक अँगोछा और धोतीहीसे काम चलाते थे।

सो भी मैले-कुचैले, और बहुतोके तो फटे चीथळे। स्त्रियाँ भी एक-एक मैली साळियोंसे गुजारा करती थी, जिन्हे चीथळे-चीथळे हो जानेपर भी पेवद लगाकर पहनती ही जाती थी। मैंने बुन्देलखण्डमें ऐसी अनेक स्त्रियाँ देखी थीं, जिनका लहँगा एकदम जर्जर हो गया था और घिरावेकी चुनावटके कारण ही आर-पार दिखाई नही पळता था; अन्यथा शायद ही कही एक अगुल साबित कपळा हो। वे क्या करे, गरीबी ही ऐसी थी।

"फिर अत्याचार कैसा? स्त्रियोका जूता पहनना उस सयम बहुत-सी जातियोमें एक तो पाप समझा जाता था, दूसरे, पहननेके लिए नसीब भी कहाँसे होता? जाळेके दिनोमे फटे चीथळोको सीकर, अगर किसीने एक गुदळी बना पाई, तो समझ जाओ, उसने बळा ऐश्वर्य पा लिया। पुवाल बिछाकर लळकेबाले सब उसी गुदळीके नीचे दबककर सो जाते थे। सोनेके लिए चारपाइयाँ सबको नसीब न थी। कपळोकी तगीसे बहुतोको जाळा भी पुवाल ओढकर काटना पळता था। लकळियाँ कहाँ नसीब थी कि आग तापते? यदि घास-फूस इकट्ठा कर पाया, तो बळी प्रसन्नतासे उसके किनारे बैठकर परिवारने थोळी देर धुँआँ लिया।

"मुझे खूब याद है। एक समय मै जाळेके दिनोमे बहुत सबेरे ही रास्तेसे जा रहा था। उसी रास्तेपर फटी-पुरानी, मैली-कुचैली साळी पहने एक बुढिया सूपमें कुछ लिये आ रही थी। उसके पीछे-पीछे दो लळके चार-पाँच वर्षके थे। उनमेंसे बळेके पास एक लँगोटी थी, छोटेके बदनपर एक सूत भी नही था। माघ-पूसका जाळा पळ रहा था। सर्दीके मारे दोनों बच्चे ठिठुरे जा रहे थे। उन्होने अपनी मुट्ठियोको खूब कळी बाँधकर कमर झुका ली थी।

ऐसे लळके एक-दो नहीं, लाखों उस समय भारतमें थे।

"सळा-गला, खराब अन्न भी उस समय करोळो आदमियोंको पेट भर न मिलता था। कितने ही लोग पेटके लिए गाँव-गाँव भीख माँगते फिरते थे। मैने अपनी आँखोंसे अनेक स्थानोपर ऐसे लळकों और आदमियोंको देखा था; जोकि, खानेवाले बचे टुकळेको जब फेंक देते थे, तो उसे कुत्तोंके मुँहसे छीनकर खा जाते थे। यह बात नही कि लोग परिश्रमसे घबराते थे। दस-बीस चाहे वैसे भी हो; किन्तु अधिकतर ऐसे थे, जो रातके चार बजेसे फिर रातके आठ-आठ दस-दस बजे तक भूखे प्यासे खेतों, दूकानों, कारखानोपर काम करते थे, फिर भी उनके लिए पेट-भर अन्न और तनके लिए अत्यावश्यक मोटे-झोटे वस्त्र तक मुयस्सर न होते थे। बीमार पळ जानेपर उनकी और आफत थी। एक तरफ बीमारीकी मार, दूसरी ओर औषध और वैद्यका अभाव, और तिसपर खानेका कही ठिकाना न था। १९१८ के दिसम्बरका समय था, जबकि सिर्फ इन्फ्लुयेंजाकी एक बीमारीमें, और सो भी ४-५ सप्ताहके अन्दर, ६० लाख आदमी भारतवर्षमें मर गये। मरनेवाले अधिकतर गरीब थे। जिनके पास न सर्दीसे बचनेके लिए कपळा था, न पथ्यके लिए अन्न; न दवाके लिए दाम था, न रहनेके लिए स्वच्छ मकान। वह पशु-जीवन नही, नरकका जीवन था। आदमी कुत्ते-बिल्लीकी मौत मरते थे। मुझे आज-कलकी भाषा-परिभाषाका बोध नहीं, अतः उसी पुरानी भाषाहीमें बोल रहा हूँ। सम्भव है, आप लोगोंको कहीं-कही समझनेमें कठिनाई हो।

"महिलाओ और सज्जनो! जिस समय देशके अधिकांश मनुष्य

इस प्रकारका जीवन व्यतीत कर रहे थे उस समय बहुत थोळे आदमी थे, जो इनसे कुछ अच्छी दशामें थे; जिन्हें उस समयकी परिभाषामें खाता-पीता कहते थे। हाँ, अँगुलियोंपर गिनने लायक ऐसे आदमियोंका भी समूह था, जिन्हें सब प्रकारके भोग सुलभ थे। ये लोग धनिक थे और नवाब, राजा, बाबू, तालुकेदार, बळे-बळे जमीदार, सेठ-साहूकार, महाजन, कारखानेदार, इत्यादि नामोंसे पुकारे जाते थे। यद्यपि एकाध उनमेंसे कोई निकल आते थे, जिन्हे उपरोक्त दुखियोंका कष्ट प्रभावित करता था। परन्तु ऐसोंकी सख्या नहींके बराबर थी। धनी लोग बळे-बळे महलोमें रहते थे, जो दो-महले चौ-महले पँच-महले होते थे। उन्हे केवल अपने शरीरकी सेवाके लिए बहुत-से स्त्री-पुरुष परिचारकोकी आवश्यकता थी। कितने ही राजाओं के पास तो दो-दो तीन-तीन सौ लौंळियाँ थी। दो-दो, चार-चार सौ स्त्रियोंसे उनका रनिवास भरा रहता था। इसपर भी ये लोग धर्म-धुरन्धर कहे जाते थे। किसीकी इज्जत बिगाळ देना, किसीका स्वत्व अपहरण कर लेना, इनके इशारोका काम था। जब ये चलते थे, तो इनके आगे-पीछे सैकळों आदमी इनकी शरीर-रक्षाके लिए चलते थे। कितने तो पालकियोंपर चलते थे, जिन्हे आदमी ही ढोते थे। गाली तो सदैव इनके मुखारविन्दोकी शोभा थी। जरा-जरा बातमे अपने आदमियोका वह उसीसे सत्कार किया करते थे। आप सो रहे हैं—दूसरे उनके पैर दबा रहे है, पखे झल रहे है। ये लोग अपने हाथसे कोई भी काम करना अप्रतिष्ठा-जनक समझते थे। एक आदमीके लिए कितनी ही मोटरें, घोळे-गाळियाँ, टमटम, सवारीके घोळे, हाथी रहते थे। उनमेंसे बहुत तो दिन-रात शराब, भंग, अफीम

आदि नशोंमेंसे किसी-न-किसीमें मस्त रहते थे। स्वयं परिश्रम कुछ भी न करते हुए, दूसरेकी मिहनतकी कमाईमें आग लगाना ये लोग खूब जानते थे। दूसरेके जख्मपर 'सी' करनेवाले तो कम, पर नमक लगानेवाले अधिक थे। सिर्फ अपने एक शरीरके खाने कपड़ेपर ये लोग जितना खर्च करते थे, उतनेसे हजार आदमी सानन्द जीवन व्यतीत कर सकते थे। इनको अकेले रहनेके लिए, सैकड़ो आदमियोके रहने लायक मकान होते थे। सबसे असह्य बात तो यह थी कि दुराचार, और अत्याचार की साकार मूर्ति होनेपर भी, ये लोग धर्मके स्वरूप बनकर ससारमें ध्रुव-पद ग्रहण करना चाहते थे, जिसमें कुछने यदि सफलता पाई हो, तो भी सन्देह नही। वह अपने सामने मनुष्यताका मूल्य नही समझते थे। इनका जादू न्यायाधीश, धर्माध्यक्ष पडित-मौलवी-पादरी, सभीपर था। सभी इनकी 'हाँ-में-हाँ' मिलाते तथा इनके लाभकी बातके लिए अपने-अपने धर्म-ग्रन्थोसे प्रमाण देनेको तत्पर थे। पडित कहते थे, "धनी-गरीब, राजा-प्रजा अपने-अपने पूर्व जन्मकी कमाईसे होते है। यह सनातनसे चला आया है। यही भगवान्‌की इच्छा है। वेद-पुराण सब इसके साक्षी है।" मौलवी कहते थे, "खुदाने दुनियाकी भलाईहीके लिए अमीर-गरीब, बादशाह-रैयत बनाया, नही तो दुनियाका काम कैसे चलता? सारे रसूल, पैगम्बर इस बातके कायल और अपनी किस्मतपर सन्तुष्ट थे। बादशाह और मालिकपर खुदाका साया है।" ऐसे ही सभी एक ही सुरमें अलापते थे। असल बात तो यह थी कि लाखों परिश्रमी दीनोंका भाग छीनकर धनी लोग अकेले ही सब न खाकर कुछ टुकड़े इन लोगोंको भी फेंक देते थे, जिनपर ये लोग हाँ-में-हाँ मिलाना अपना

कर्त्तव्य समझते थे। धन्यवाद है कि अब वह जादू उतर गया।

"अब तो आप सबको यह सब बाते सुन-सुनकर आश्चर्य होता होगा—क्या वे लाखों आदमी सचमुच भेंड़ थे, जिन्हें एक धनी अपनी अँगुलीके इशारेपर नचाता था! यदि वे लोग जरा भी अपनी बुद्धिसे काम लेते तो क्यों गुलामीमें पड़े रहते ? सचमुच आज यह तर्क बहुत सरल है, किन्तु उस समय यह सोचना असम्भव मालूम होता था—शेख-चिल्लीका महल कहलाता था। आजकी अवस्थाके शतांशका भी विचार रखनेवाले उस समय पागल, सब्ती, अधर्मी, मनुष्यताके शत्रु समझे जाते थे। शिक्षा लाभ करके प्रत्येक आदमी उसी धनिक श्रेणीका बनना चाहता था, चाहे हजारमें कोई एक ही हो पाता हो। इस प्रकार शिक्षित और धनिक तो इस तत्वकी ओर ध्यान न देते थे और बेचारे गरीब इसे असम्भव समझते थे। वह अपने ही कमजोर ख्यालोंसे इस प्रकार जकड़े हुए थे कि सचमुच उन्हे ऐसा होना असम्भव मालूम पड़ता था। आप कहेंगे—कैसी मूर्खता है। अपनी मिहनतकी कमाई दूसरेको खाने न देकर हमी खायेंगे, इतनी बात समझना कौन कठिन था ? किन्तु, उनके लिए तो यही लोहेका चना था। उधर धनी लोगोंकी ओरसे कहा जाता था—ऐसा होनेसे धर्म नही रहेगा; जाति-मर्यादा चली जायगी; कलयुग आ जायगा। अभाग्यवश श्रमजीवी लोग भी अनेक ऊँच-नीच श्रेणियोंमें विभक्त थे। बिहार का ब्राह्मण श्रमजीवी कहता था—गरीब है तो क्या, खानेको नहीं मिलता तो क्या, किन्तु चमार, अहीर, राजपूत 'पा-लगी' तो करते हैं—'महाराज' तो बोलते हैं ? भला चमार, अहीर हमारे बराबर हो जायेंगे ?

सचमुच बड़ा अधर्म होगा ! भूखा मरना अच्छा; अपनी कमाई दूसरा खाय, वह भी अच्छा; किन्तु चमारको अपने ही ऐसा मनुष्य समझना ठीक नही। ऐसे ही, अपनेसे ऊँची जातिके पठान। सैयदके अभिमान को, चाहे गाँवका मोमिन जुलाहा दिलसे न अच्छा समझता हो, किन्तु, अपनेसे नीचे गिने जानेवाले भंगीको अपने बराबर होने देना उसे भी अभीष्ट न था।

"अब अन्त में, आपलोगोंके वर्तमान ध्येयके विषयमें कुछ कह कर मै अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ। सबसे प्रथम तो यह कि यह न समझ बैठो कि हम अब अन्तिम स्थानपर आ गये; अब हमारी सभी बातें पूर्ण है, अब हममें कोई त्रुटि नही। जिस समय यह विचार आ जायेगा, उसी समयसे आप पीछेकी ओर खिसकने लगेंगे—आपका ह्रास होने लगेगा। मनुष्य कहाँ तक उन्नति कर सकेगा, यह असीम है। जिस प्रकार कुछ दिनो-पूर्व ज्योतिषमें अति दूर एक सितारा आविष्कृत हुआ था, आगे उससे भी दूर दूसरा मिला है; उसी प्रकार, लाखो वर्षों तक दूर-से-दूर सितारोंका पता दूरबीनो और फोटो-चित्रोंसे लगता जायगा; किन्तु उससे नक्षत्र-मण्डलकी इयत्ता नही हो सकती। वैसे ही हमारी उन्नति, हमारे संशोधनका क्षेत्र अनन्त दूर तक विस्तृत है। दूसरी बात ज्ञानकी वृद्धि है। इसमें सन्देह नही; उस समय शिक्षामें जो उच्चता की अवधि थी, अब वहीसे उसका आरम्भ है। आपका समाज बहुत सुशिक्षित, और सभ्य है, किन्तु आप उन्नति करके आजके अन्तको कल का आरम्भ बना सकते हैं। आपके उत्तराधिकारियोंको भी ऐसा

अधिकार है। यह बळे आनन्दकी बात है कि आज विद्या विद्याके लिए पढ़ी जा सकती है। आज विद्याका वह पारितोषिक नही, मूल्य नही जो दो शताब्दियो-पूर्व रखा जाता था। आजकी सभी समृद्धिका मूल वही ज्ञान—वही विद्या—है, जिसकी कमीके कारण पहिले लोग मनुष्यता से गिर गये थे। इसकी वृद्धिमें उपेक्षा और इसके प्रचारमें असावधानी होना सभी खराबियोकी जळ है। उन्नतिकी आकाक्षा और ज्ञानका अधिक-से-अधिक प्रसार यही दो मूल बाते है जिनसे आपने अब तक उन्नति की है और आगे भी इसके लिए असीम क्षेत्र पळा हुआ है। मै आपके प्रेममय भावोसे अत्यन्त सन्तुष्ट हूँ। और बस।"

मेरे व्याख्यानकी समाप्तिपर साथी इस्माइलने एक बार उठकर फिर मुझे धन्यवाद दे, सभा विसर्जित की। मै विश्वामित्र, इस्माइल, देवमित्र, इस्माइलकी पत्नी प्रियम्वदा, तथा दूसरे सज्जनोके साथ विश्राम-स्थानपर आया। रात्रिके दस बज चुके थे, मैंने उनकी सूचना और प्रार्थनाके उत्तरमें संक्षेप में कहा कि कल परसो और चौथे दिन मै यहाँ ही रहकर आस-पासका तथा आपके ग्रामका अध्ययन करूँगा। इसके बाद अध्यापक विश्वामित्रके साथ यहाँसे सीधे नालन्दा जाऊँगा। वहाँसे भारतके प्रधान-प्रधान स्थानोंकी स्थितिका अध्ययन करके फिर कही बाहर कदम रखूँगा। आप सार्वभौम राष्ट्रपति श्रीदत्तको भी इसकी सूचना दे दें। देवमित्रने कहा आपके साथ, साथी इस्माइल और साथिन प्रियम्वदा भी बराबर रहेंगी, और यहाँकी बातोंके समझनेमें सहायता पहुँचायेंगी। मैंने इसके लिए प्रसन्नता प्रकट की। इसके बाद सब

लोग अपने-अपने स्थानको चले गये। विदा होते समय इस्माइलजीने भी सलाम नहीं किया। मुझे पहलेहीसे इन लोगोंके मजहबसे दूर हो जानेकी झलक दिखलाई पळती थी, और पूछनेकी इच्छा होती थी। अब वह इच्छा और बलवती हो गई। विश्वामित्र पास ही बैठे थे। मैंने पूछा—

"विश्वामित्र! यद्यपि मैंने लोगोंके नाम हिंदू मुसलमान जैसे सुने; किन्तु, उनकी पोशाक, बात-चीत, सलाम-दुआमें कोई फरक नही मिलता, क्या सभी मजहब मिल गये?"

"मिल नही गये; प्रगति-विरोधी उन मजहबोंको हमने निकाल फेंका। नामोमें भी बहुत परिवर्तन है, तो भी लोग जैसी इच्छा होती है वैसा नाम रख लेते हैं।

"और भाषा? इस समय सारे भारतकी मातृभाषा 'भारती' है। जिसे आपके समयकी हिन्दी-उर्दूकी प्रतिनिधि कहना चाहिये। यही एक भाषा सर्वत्र बोली जाती है, लिपि भी नागरी है। अब भाषाकी कठिनाइयाँ नही हैं। भिन्न-भिन्न प्रान्तोमें साहित्यिक-धार्मिक जिज्ञासासे और भी भाषायें पढ़ी जाती हैं; किन्तु है 'भारती' भाषा ही सर्व-सर्वा। चाहे किसी भी प्रान्तका भारतीय क्यो न हो, उसकी भाषा भारती होगी। अब पुराने पक्षपात तो रहे नही, इसलिये सबके भाषा, भाव, वेष, एक हो गये है।"

मैंने अब अधिक देर तक विलम्ब करना उचित नहीं समझा। समय की व्यवस्थाओंसे मुझे अनुमान हो गया था कि शयन आदिका भी

अवश्य कोई नियम होगा। विश्वामित्र भी अपने कमरेमें सोने चले गये। मैं भी अपने पिछले सोनेवाले कमरेमें पलगपर जा लेटा। अभी मेरी आँखों में नीद नही थी। सामने दीवारसे लगा हुआ बिजलीका छुड़ाकार प्रदीप अपना प्रकाश फैला रहा था। तापक मकान को गर्म किये हुए था और वहाँ सर्दीका नाम न था। आज षष्ठी तिथि मालूम होती थी। चन्द्रमा अभी वृक्षोके शिखरसे मेरी कोठरीमें झाँकने लगा है। सामनेका पर्वत कुछ दूर है। चाँदनी चारो ओर छिटकी हुई है। रात्रि स्तब्ध है। मेरे बिस्तरेपर आनेके साथ ही रेलका घर-घराना सुनाई दिया था। इस सन्नाटेकी अवस्था में, एक-एक करके आजके प्रत्येक दृश्यकी फिर एक-एक बार आवृत्ति होने लगी। साथ ही मनने सब पर एक-एक स्वतन्त्र टिप्पणी भी करनी आरम्भ कर दी। स्त्री-जाति की स्वतन्त्रताका दृश्य सम्मुख आते ही कहा—तब तो एक-एक हाथके घूँघट और बुर्कोंकी बोरा-बदी अब काहेको दिखाई देने लगी? अब दो बीस, चार बीस करके गिननेवाली स्त्रियाँ कहाँ मिलेगी? अब, लळकोके पूछनेपर, चन्द्रमाके धब्बे, तारा, आकाश-गगाकी विचित्र कथा सुनानेवाली माताये कहाँ मिलेगी? धनियोका ख्याल आते ही सोचा—तो अब राजाबहादुर, महाराजाबहादुर, रायबहादुर, खानबहादुर, नवाबबहादुर होनेके लिए कोई न मरता होगा। अब इन पदोंके दाता-प्रतिगृहीता सदाके लिए भूमण्डलसे विदा हो गये। अबके गाँवका दृश्य सम्मुख आते ही पुराने गाँवका चित्र दिलसे भागने लगा। शायद इसीलिए कि आसानीसे उसका ज्ञान न हो जाय। मैंने भी मनसे कहू

दिया—तो इसकी पर्वाह क्या, तुम न दिखलाओगे, तो जादू-घरमें देखने से तो रोक न सकोगे ?

एक-एक करके सब टिप्पणियाँ समाप्त हुईं । इसी बीच ग्यारह बजे का घण्टा भी बज गया था । मैंने कहा, अब बारह भी थोड़ी देरमें बजेगा; कलके कर्त्तव्यका थोड़ा-सा विचार करके सो जाना अच्छा है । सोचा—सेब-ग्रामकी बागोंकी बातें तो देख सुन ली । घरों और श्रेणियोंकी भी बात मालूम हो गई । संस्थागार-भोजनागार भी देख ही लिया । सुमेधने कहा था कि तीन वर्षके होते ही बालक शिक्षार्थ विद्यालयोंमें भेज दिये जाते है । तो यह देखना है कि तीन वर्ष तकके बालक कैसे रहते है , चिकित्सालय भी देखना है , गांवकी सफाई आदिकी बातें जाननी हैं; यही मुख्य बातें हैं । इस्माइल और विश्वामित्र दोनों ही विस्तृत अनुभववाले पुरुष हैं । इनके साथ सबका देखना और भी अच्छा होगा । इस प्रकार विचार कर मैंने आज निद्रा-देवीकी गोद में विश्राम लिया ।

---

६

# ग्राम और ग्रामीण

पाँच बजनेसे पहले ही मेरी नीद खुल गई थी। मैं उठकर उस समय खिळकीसे आकाशकी ओर देख रहा था। चारों ओर तारे बिखरे हुए थे। चन्द्रमा मेरे सम्मुख नही था, किन्तु चाँदनी नजर आती थी। चाँदनीमें खिळकीके बाहर लदे हुए फूल खूब दिखलाई पळते थे। गुलाबकी भीनी-भीनी सुगन्ध दबे-पाँव मेरे कमरेमे आ रही थी। अभी दस-पाँच मिनट ही बीते होगे, कि गोलेकी आवाज हुई। पाँच बज गये। थोळी ही देरमें देव भी आ गये। उन्होंने पहले झाँककर देखा; जब मुझे बैठा पाया, तो भीतर आये। पूछा—क्या स्नान अभी होगा; यदि अभी, तो क्या यही घरके नलपर स्नान-पात्रमें, या स्नानागार के गर्म-कुंड में ?

मैंने कहा, मैं यहीं स्नान कर लूँगा। कल तो मुझे शौचकी आकांक्षा ही नही हुई थी। अब देवने बतलाया कि पीछेकी ओर वह पाखाना है। प्रत्येक घरका अलग-अलग पाखाना है जिसमें नल लगा हुआ है। पाखाना हो लेने पर नल घुमा देनेसे पानीकी बळी तेज धारा आती है, और मलको नलोंके द्वारा बहा ले जाती है। पीछे यह भी मालूम हुआ कि पाखानोंपर भंगी नही रखे हुए हैं। भंगी तो अब कोई जाति ही नही है। हाँ, नल बिगळ जानेपर कोई भी आदमी, जो नलोंके सुधारनेपर नियुक्त है, उसे ठीक कर देता है। सारे गाँवका मैला बळे-बळे नलों-द्वारा दो-तीन कोसकी दूरीपर जाता है। वहाँपर बळे-बळे गड्ढे, कलों-द्वारा खोदे हुए तैयार रहते हैं। मिट्टी नीचे भी खुदी, और बाकी आस-पास लगी रहती है। इधर मैला गिरता जाता है, और उधर मशीन मिट्टी उसपर फेंकती जाती है। मशीनें बिजलीके जोरसे चलती है और चलानेवाले भी दूर रहते हैं। यद्यपि मिट्टीसे ढाँके रहने तथा खुली हवासे मैले का सम्पर्क न होनेसे, वहाँ दुर्गन्ध नहीं मालूम होती, तो भी संचालक लोग मशीनोंके बिगळ जानेपर वहाँ जाते हैं। एक गड्ढेके भर जानेपर पहलेसे दूसरा गड्ढा तैयार हो गया रहता है। इसी तरह एक भरा गड्ढा चार वर्ष तक बन्द छोळ दिया जाता है। पीछे खोद कर, उसमें और कुछ रासायनिक पदार्थ मिला कर, वह वृक्षोंमें खादकी भाँति उपयुक्त होता है।

मैं अपने बिस्तरेसे झट उठ खळा हुआ, और पहले शौच गया। पाखाना स्वच्छ था—वह पाखाने-सा मालूम ही नहीं होता था। अभी

में मकानकी पिछली ओर नहीं आया था। देखा, थोळी-थोळी दूरपर, छोटे-छोटे एक ही तरहके पाखाने बने हुए हैं। ये घरसे दस-दस हाथ हट कर हैं। बीचमें वैसे ही फूल, बेल-बूटे लगे हुए हैं जैसे कि सामनेकी ओर। 'अतिथि-विश्राम'की सम्पूर्ण श्रेणीके आगे-पीछे, एक पार्क-सी लगी यह फुलवारी बळी सुन्दर मालूम होती है। पीछे मैंने देखा, सभी श्रेणियोंका प्रबन्ध ऐसा ही है। अपने घरोंके आमने-सामने फुलवारियों को ठीक रखना, अपने-अपने घरको स्वच्छ-शुद्ध रखना घरवालोंका अपना काम है। मैं शौचसे आकर स्नानके कमरेमें गया। जाकर देखा, ठंढे और गर्म जलके दो नल लगे हुए हैं। सफेद दूधकी भाँति चीनी-मिट्टी का, पत्थर-सा मजबूत, दो हाथ लम्बा, डेढ़ हाथ चौळा, दो हाथ गहरा स्नान-पात्र क्या एक कुण्ड ही जमीन में मढ़ा हुआ है! नलकी बगलमें दीवारसे लगे एक स्थान पर साबुनकी टिकिया तथा उससे ऊपर खूटियोंपर एक सफेद तौलिया और एक धुली हुई लुंगी रखी है। गर्म पानीका नल खुला हुआ है, और हौज लबालब भरा हुआ है, तो भी पानी ऊपरसे नहीं निकलता है। मैंने हाथ-पाँव धोया। विचार किया कि अब दतुवन करना चाहिये। दतुवन तो दीख नहीं पळी; हाँ, साबुनकी टिकियाके पासमें एक चाँदीकी डिब्बीपर एक दाँतका ब्रुश देखा। खोलनेपर डिब्बीके अन्दर सुगन्धित दाँतकी लेई मिली। मैंने विचारा, मालूम होता है, अब दतुवनका रेवाज ही नहीं रहा। पीछे विश्वामित्रने बताया, एक ही सेवग्राम के लिए पाँच हजार दतुवन चाहिये। अब फ्लूलके पेळ तो यहाँ हैं नहीं।

अच्छे पेळोंसे दतुवन तोळी जाने लगें, तो नित्य ही एक-दो पेळ सिर्फ एक गाँवके लिये खराब हो जायें। फिर भूमंडलकी जन-संख्या तो डेढ़ अरब है। इसीलिये ब्रुश और मंजनका प्रबन्ध किया गया है। अनार, बादाम आदि के छिलकोंको क्या हम लोग बेकार जाने देते हैं? सबसे मंजन या कोई-न-कोई और कामकी वस्तु बनाई जाती है।

मैने ब्रुश और लेईसे दाँत-मुँह साफ किया और कुण्डमें प्रविष्ट होकर, साबुनसे मल-मलकर खूब नहाया। इस प्रकार नहा-धो, कपळे बदलनेपर, देवने आकर एक कल घुमाई और स्नान-पात्रका सब जल निकल गया। उसी कमरेमें एक ओर खिळकीके पास एक ऊँचे स्थान पर स्वच्छ आसन बिछा हुआ था। मैने वहाँ जाकर कुछ व्यायाम किया। इसके बाद बैठनेके कमरेमें आया। अब सूर्यकी रक्तिमा प्राची दिशामें फैली हुई थी। सूर्य-बिम्बकी एक पतली सुनहली रेखा ही अभी दिखाई पळती थी। जगह-जगह पक्षियोंका मधुर कलरव अब भी जारी था। हवाके झोंके सामनेके फूलोंको हिला रहे थे। सळक और सामनेके घरोंकी शोभा और स्वच्छता बिखरी हुई थी। मेरा भी चित्त अत्यन्त शान्त और प्रसन्न था।

इसी समय विश्वामित्र भी आ गये। उनके साथ पद्मावती भी थीं। मेरे कहनेपर वे दोनों भी पास ही रखी कुर्सियोपर बैठ गये। यद्यपि चेहरा छोळ, सभी का सारा शरीर ढँका हुआ था; तो भी गर्म मकान में सर्दी कहाँ थी? सहस्रों वर्णनीय बातें हैं। सबका वर्णन कैसे हो सकता है? पुरुषों और स्त्रियोंकी पोशाक, देखनेमें यही नहीं कि बळी सुन्दर

थी, बल्कि उसमें कोई वस्तु व्यर्थ, अनुपयोगी और हानिकारक भी न थी। मैंने कामके समय तो पुरुष-स्त्रियो, दोनोंको, ऊनी जाँघिया और नीचे लम्बा मोजा और सारा पैर ढँके हुए एक प्रकारका जूता देखा। मैने आश्चर्य से देखा कि चमळेकी कोई चीज न थी। जूते भी थे एक तरहकी मोटी जीनके, ( जो देखनेमें चमळेसी मालूम होती थी ), जिनके तल्ले दृढ़ रबरके थे। कुर्तोंके नीचे एक गर्म कोट और सबके सरपर एक ही प्रकार की टोपियाँ थी। किन्तु मालूम होता है, यह पोशाक कामके वक्त की थी, क्योंकि रातको भोजनके समय तथा संस्थागारमें वह पोशाक न थी। सबके सिरपर एक प्रकारकी गोल टोपी, पैरो तक लम्बे गर्म कोट और नीचे पतलून थी।

स्त्रियो के पहरावे जूता, मोजा, साळी, और कुर्ती है। अधिक सर्दी पळनेपर वह एक लम्बा गर्म कोट भी पहनती है, तथा सिरपर टोपी भी लगाती है। स्त्री या पुरुष कोई किसी प्रकारका भी जेवर नहीं पहनता। कलाई या पाकेट की घळियोका भी चलन नही। निर्बल दृष्टिवाले तथा जिन्हे उसकी आवश्यकता है, चश्मा भी लगाते हैं। हर एक व्यक्तिके पासएक-एक फौंटेन-पेन और एक-एक रोजनामचा भी देखा। कलका वृत्तान्त लिखनेकी जब मेरी इच्छा हुई, तो मुझे भी मेरी इच्छानुसार एक बळा रोजनामचा, और एक फौंटेन-पेन मिली। इसकी निब प्रायः बिल्कुल ही सोनेकी थी, शायद कळाईके लेहाजसे कुछ इरिडियम नोकपर लगाई गई हो। क्लिप भी सोनेकी। बात यह है, अब लोगों के लिये सोनेका और उपयोग ही क्या हो सकता है ? पौंड और मुहर

तो चलते ही नहीं। न लोग आभूषण पहनते है, न गाळ कर रखनेहीका काम है। अतः इन्हीं सब चीजोमें उसका उपयोग होता है।

विश्वामित्र और पद्मावतीके आनेके थोळी ही देर बाद इस्माइल भी अपनी साथिन प्रियम्वदाके साथ आ पहुँचे और कहा, अब सात बजने ही वाला है, आज जलपानके बाद 'शिशु-उद्यान' देखना अच्छा होगा। प्रियम्वदा वहाँकी सहायक अधिष्ठात्री है। अभी यह, मुख्याधिष्ठात्री साथिन फातिमाको इस बातको सूचना भी दे आई हैं। मैंने भी कहा, बहुत अच्छा, इस समय 'शिशु-उद्यान' देखा जाय, और दोपहर के बाद चिकित्सालय। इसी बीच गोलेकी आवाज आई और हमलोग भोजनागारकी ओर चले।

सळकके दोनो ओर आस-पासके मकानोंकी शोभा और ही थी। सब मकानोंकी बनावटमें दृढ़ता, स्वच्छता और सुन्दरताका पूरा-पूरा ध्यान रक्खा गया है। पूर्ववत् ही हमलोग हाथ-मुँह धो कुर्सियोपर बैठे, जलपानके लिए एक-एक जलेबी, दो-दो अंडे और एक-एक गुलाब-जामन एक तश्तरीमें रखे थे। दूसरी तश्तरीमें ताजे तथा सूखे कुछ फलोंके कतरे और एक गिलास साफ जलके अतिरिक्त एक गिलास खाली भी रखा था, जिसमें पीछेसे गर्म दूध दिया गया। पूर्ववत् घंटीपर खाना आरम्भ हुआ। अब हम लोग—विश्वामित्र, इस्माइल, प्रियम्वदा और मैं—वहाँसे शिशु-उद्यानकी ओर चले। मालूम हुआ कि शिशु-उद्यान गाँवके अन्त में है।

रास्तेमें पूछनेपर विश्वामित्रजीने कहा, पान हीका नहीं, अब

बहुत-सी चीजोंका रवाज उठ गया है। तम्बाकू खाना-पीना, बीळी-सिगरेट, शराब-गाँजा, भंग-अफीम किसीका अब पता नहीं। बात यह है कि जो नशीली चीजें है, वे तो हैं ही वर्जनीय। उनका रोकना तो उनकी हानि-कारिताके कारण ही आवश्यक था; किन्तु, जो अनावश्यक है उन्हे भी राष्ट्रने बन्द कर दिया। कोई चीज एक आदमीके उपयोग के लिये, बिना विशेष स्वास्थ्यादि हेतुके तो दी नही जा सकती। सबके लिये नियम एक होना चाहिए। जितने कपळे साल भर में एक आदमी को मिलते हैं, सारे राष्ट्रमें उतने ही प्रत्येकको मिलते है। यदि पान का प्रबन्ध किया जाय, तो सारे राष्ट्रके लिये प्रबन्ध करना होगा। भारतमें २५ करोळ आदमी रहते है। आप विचार कर सकते है कि इतने आदमियोके पान, कसैली, चूना, कत्था, तैयार करनेमें लाखो आदमियोको लगा रहना पळेगा। इतनी फजूलखर्ची करना आज राष्ट्र कैसे गवारा कर सकता है ? जो लाखो बीघे खेत पान, तम्बाकू आदि के पैदा करनेमें फँसे रहते, आज उनमें अन्य उपयोगी पदार्थ उत्पन्न किये जाते है। अनावश्यक व्ययके कारण ही चाय, काफी, भी संसार से उठ गई। अब उनके स्थानपर शुद्ध, गर्म, मीठा दूध सबको जाळेमें तीन वक्त और गर्मीमें दो वक्त मिलता है।

मैंने कहा, तुम्हारी आजकी राष्ट्रीय प्रगतिने तो सारे ही दुर्व्य-सनोके लिए एक ही पर्याप्त कुल्हाड़ी ढूँढ निकाली है। फिर मैंने पूछा—अब हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाईके पृथक् भोज आदिका झगळा तो रहा नही, किन्तु मांस खानेवालोका कैसे निपटारा होता होगा।

इसपर विश्वामित्रने कहा—अब असली मास मिलता ही नहीं। नकली मांस खानेमें किसीको सकोच नही।"

"और अडा ?"

"वह तो परम सात्विक फलाहार है।"

"अब क्या यूरोप-अमेरिकामें सूअर आदि नही पाली जाती होंगी ?"

"नही, बिल्कुल नही। बस्तीमें यही न देखिये, कहीं कोई जानवर है? पहले जैसे मैने बन्दरोंके बारेमें बताया था कि बंदरियोंको पकळ कर पिंजळोंमें बन्द कर दिया गया, जिसके कारण कुछ वर्षों में उनकी जाति ही उच्छिन्न हो गई। इसे जाति-उन्मूलन-प्रक्रिया कहते हैं। सूअर, कुत्ता, बिल्ली सबका जाति-उन्मूलन हो गया है। केवल प्राणि-विद्याके विद्यार्थियोके उपयोगके लिए कही कही उन्हें पालकर रखा गया है।"

"चमळेका तुम लोगोने तो व्यवहार छोळ दिया, इसलिए मास छोडनेसे उधर तकलीफ नही उठानी पळी होगी; किन्तु इतना जो दूधका खर्च है, उसके लिए गाएँ तो बहुत पालनी पळती होगी? खैर, मारनेसे नही, तो अपनी मौतसे तो उनमेंसे हजारों मरती होंगी? उनका चमळा भी क्या मशीनोंके 'बेल्ट' के लिए काममें नहीं लाया जाता?"

"मशीनोकी बेल्ट भी चमळेसे कही मजबूत कानविसकी बनती है। चमळेको अलग करना, उसको सिझाना इत्यादि बळा गन्दा काम था। जिससे वायु बहुत दूषित हो जाती थी। अतः वह काम ही एक दम

छोळ दिया गया। पशुके मरनेपर उसे खोद कर गाळ दिया जाता है। पीछे खाद हो जाने पर उसे व्यवहारमें लाया जाता है। ऐसे बेकार तो, जहाँ तक हो सकता है, कोई भी चीज जाने नहीं पाती। हड्डियोका हम लोग पूरा उपयोग लेते हैं, गोबर आदि भी खादके लिए उपयुक्त होते है।"

हम लोग बातें करते जा रहे थे। रास्तेमें मिलनेवाले सभी नर-नारी मेरी ओर देखते चले जाते थे। ग्राम पहाळके नीचे और नदी के किनारे होनेसे लम्बाईमे अधिक है। चौळाईमें तो पाँच सळकें ही है। सळके अच्छी चौळी है, जिनके दोनो ओर घने वृक्ष लगे हुए हैं। प्रत्येक सळकके दोनों ओर गृह-श्रेणियाँ हे। प्रत्येक श्रेणीका पिछला भाग अगली श्रेणीके पिछले भागसे मिला है, अर्थात् दोनोके पाखाने एक ही में जुळे है। इस प्रकार चौळाई मे छ· श्रेणियाँ है। ग्रामकी लम्बाई पूर्व-पश्चिम है। एक श्रेणीकी समाप्ति पर उत्तर-दक्खिन जानेवाली एक-एक सळक है। यदि कोई आदमी ग्रामणी-कार्यालयसे चले, तो एक चौराहेपर अतिथि-विश्रामकी श्रेणी मिलेगी। इसके बाद साधारण श्रेणियाँ है। तीन चौराहे पार कर चौथेपर 'संस्थागार' पळेगा, जो दो श्रेणियो के बराबर जगह घेरता है। ग्राम-पुस्तकालय इसीमें लगा हुआ एक बळा हाल है। यहाँसे अवश्यकतानुसार पुस्तकें श्रेणी-पुस्तकालयोमें भी आती-जाती रहती हैं। 'संस्थागार' और भोजनागारमें एक ही सळक का अन्तर है। गाँवके नये और बळे-बळे सिलाई आदिके काम तो दर्जी-ग्रामों आदिसे बन कर आते है, किन्तु फिर भी कोई बीचमें मरम्मत

या जल्दीके कामके लिए ग्रामणी-कार्यालयके सामने सीने, रंगने, बिजली के शीशोंके रखने-बदलने आदिका काम होता है। उसकी उत्तर ओर उससे लगा ही हुआ धोबीखाना है, जहाँ मशीनोंके द्वारा कपळों की धुलाई, कलप आदि होती है। कपळों के सुखानेके लिए यहीं बळे-बळे गर्म हाल हैं। उससे एक सळक लाँघ कर भोजनकी वस्तुओंका गोदाम है। उसीसे लगी मोटरोंके ठहरनेकी जगह, तथा अन्य वस्तुओं का गोदाम है। अन्तमें सामान मरम्मतके कामके लिए फैक्टरी है, जहाँ लोहार-बढ़ईका भी कुछ काम होता है। इन सभी जगहोंपर मरम्मतका वही काम होता है, जिसकी जल्दी रहती है। नहीं तो, वे चीजें उन-उन ग्रामोंको भेज दी जाती हैं, जहाँ केवल उन्हींका काम होता है। इस प्रकार मालूम हो सकता है, ग्रामके सभी कार्यालय पश्चिम ओर, उत्तर-दक्खिनकी सळकपर पळते हैं। सस्थागार, भोजनागार बीच में, और शिशु-उद्यान तथा चिकित्सालय ग्रामसे बाहर पूर्व तरफ है। लम्बाईकी सळके अधिक चौळी है तथा उनपर सायादार वृक्ष लगे हुए है।

इच्छा हुई, पहले शिशु-उद्यान देखूँ, पर भोजनका समय हो गया था, इसलिए भोजनागारकी ओर मुळा। जब भोजनागार बीस गज रह गया, तभी ग्यारहका गोला दगा। सब लोग पुनः पूर्ववत् हाथ मुँह धो भोजनके लिए बैठ गये। इस वक्तका भोजन वही था, जिसे पहिले समय में लोग कच्चा भोजन कहा करते थे। रोटी, दाल, भात, मांस, साग, कढ़ी, पकौळी, सभी चीजें परोसी गई थी। मेरी दाहिनी ओर

विश्वामित्र और बाईं ओर इस्माइल बैठे हुए थे। हम लोग जरा पहिले गये थे, इसलिए दो एक मिनट अभी देर थी। मैंने कहा, इतनेमें पाकशाला ही देख आयें। भोजनागारके दक्षिण तरफ पाकशाला थी। जाकर देखा; सभी चीजोंके बनानेके लिए बळे-बळे बर्तन है, जिन्हें उतारने-चढ़ानेका काम मशीनो ही से लिया जाता है। आटा गूँधना, रोटी बनाना भी मशीनो ही द्वारा होता है। आगका काम बिजली देती है। इतनी बळी पाकशाला, जिसमें पाँच हजार आदमियोका भोजन बनता है, किन्तु कही कालिख नही, धूआँ नही। हर-एक वस्तुके डालने और उतारनेका भी समय है। आँचका भी माप है। अतः किसी वस्तुमे गळबळी होनेकी गुंजाइश नही। यद्यपि सभी वस्तुये स्वच्छ, शुद्ध ही आती है, तब भी भोजनके गुण-अवगुण-के विशेषज्ञ जब तक किसी वस्तुके लिए अनुमति नही दे देते, तब तक वह नहीं बन सकती। यह पहलेही बतला चुके हैं कि असली मास अब नहीं मिलता; किन्तु कई ऐसे पदार्थ रसायनिक योगसे तैयार किये गये हैं, जिनमें स्वाद भिन्न-भिन्न मासोका आता है, और गुण भी वही। पाकशालामें पुरुष और स्त्री दोनो ही भाँतिके पाचक है। परोसकर थालियों-कटोरियोंको लकळीके तख्तोपर सजाया जाता है, जिनके पूरा हो जानेपर भोजनागारमें बिजलीहीसे घुमाया जाता है। उसपरसे दो-तीन आदमी उतार-उतारकर मेजोंपर रखते जाते हैं। भोजन समाप्त होनेपर फिर उसी भाँति उन्हीं तख्तोंपर थालियाँ और दूसरे बर्तन रखकर, धोनेके कमरेमें पहुँचाये जाते है, जहाँ गर्म जल और शोषक पदार्थ-द्वारा मशीनहीसे उनको माँजा

जाता है। बचा हुआ जूठा भोजन मोटरपर लादकर बाहर एक जगह गाळ दिया जाता है, जिसकी खाद बनती है। किन्तु बहुधा लोग उतना ही लेते हैं, जिसमें अधिक जूठा न छूटने पाये।

घंटी बजनेसे पूर्वही, हमलोग अपने आसनपर बैठ गये थे। पीछे प्रेम-पूर्वक खूब भोजन हुआ। मुँह-हाथ धोकर जब हमलोग चिकित्सालयकी ओर चले, तो हमारे साथ देवमित्र भी थे। अब हम लोग चिकित्सालयमें पहुँचे। साथिन मनोरमा तथा उनके अन्य सहायकोने द्वारहीपर हमारा स्वागत किया। एक सहायक चिकित्सकको छोळकर चिकित्सालयके सभी कार्य-कर्त्ता महिलायें ही थीं। सहायक चिकित्सक कोई दूसरे नही, मनोरमाके पति श्री रहीमबख्स थे। दोनो ही दम्पतिने तक्षशिलामें चिकित्साका पूरा अध्ययन किया था। जन्म आप लोगोंका काश्मीरका है। मैने समझा था, पाँच हजार की जब आबादी है, तो रोगी भी उसीके अनुसार होगे, किन्तु यहाँ बिल्कुल ५० रोगी दिखाई पळे। मालूम हुआ कि अधिक-से-अधिक एक बार सौ तक बीमारोकी सख्या पहुँची थी। कोढ़, बवासीर, उपदंश, राजयक्ष्मा, मृगी, दमा आदि रोगोंका जब ससारसे ही नाम उठ गया, तो यहाँ कहाँसे मिलें? मामूली ज्वर, सिर-दर्द, अजीर्ण, कोई चोट-फाट, यही साधारणतया रोग होते है। मनोरमाने कहा—अब चिकित्साशास्त्रकी बहुत-सी पढ़ाई सिर्फ पढ़नेहीके लिए होती है; औषध-चिकित्साका तो यह हाल है ही, शल्य-चिकित्साकी और भी कम आवश्यकता पळती है; आजसे दो शताब्दियों-पूर्वके चिकित्सकोंको ही इसका बहुत प्रयोग करनेका अवसर मिलता था; तरह-तरहकी नई बीमारियाँ, राजरोग, युद्ध आदि कितने कारण थे,

जो सदा उनके पास रोगियोकी भीळ लगाये रखते थे। मै इसके लिए अफ-सोस नही करती; यदि कभी ऐसा दिन आवे, कि कोई रोग ही न हो तो कैसा अच्छा होगा! कालान्तरमें चिकित्साशास्त्रका प्रचार भी लुप्त हो जाय, तो भी कोई चिन्ताकी बात नही, किन्तु हाँ, यदि एक ओर रोगियोंकी चिकित्साका काम कम पळा है, तो दूसरी ओर स्वास्थ्य-विषयक अनेक नियमोके प्रचारके लिए पूरा समय मिला है, भोजन-आच्छादन, रहन-सहन, सभीमें स्वास्थ्यदायक और पोषक गुणोका अधिक समावेश होनेका प्रयत्न करना अब चिकित्सकका बळा आवश्यक कर्तव्य हो गया है।

रहीम और मनोरमाने चिकित्सालयके सभी स्थानोको भली प्रकार दिखाया। रोगियोके रहने, खाने-पीनेके प्रबन्धके विषयमे क्या कहना है? चारो ओर स्वच्छता-ही-स्वच्छताका साम्राज्य था। रोगी-सुश्रूषक महिलाएँ रोगकी आधी पीळाको तो अपने सहानुभूतिपूर्ण मधुर-वचन और सरस बर्तावसे दूर कर देती है। औषधोका कोष बहुत भारी है। उपयोगी हथि-यार और यंत्र भी पर्याप्त रखे हुए है। चिकित्सालयकी पाकशाला आदि सभीका निरीक्षण करके अब हम लोग वहाँसे विश्राम-स्थानको लौटे। मैने विचार किया, कल और आजकी बहुत बाते मुझे रोजनामचेमें भी लिखनी है। अभी एक बजा है तब तक यह काम करूँगा। शामको आने-के लिए कहकर इस्माइल और प्रियम्वदा तो चली गईं, किन्तु देव विश्राम-स्थानपर पहुँचाकर लौटे। मैंने विश्वामित्रसे रोजनामचा लिखनेकी बात कही। वह भी अपने कमरेमें चले गये। मैं अकेला कलम निकालकर लिखने बैठा। लिखने-योग्य बातोका तो ठिकाना नहीं था, किन्तु मेरे पास समय

और स्थानका संकोच था। मैंने, जहाँ तक हो सका, मुख्य-मुख्य अंशोंको ही संक्षेपमें लिखना निश्चित किया। कोई प्रधान बात कहीं छूट न जाय, इसलिए मैंने निश्चित किया कि दिन भरके लेखनीय विषयको रात्रिमें सोनेके पहले अवश्य लिख डालना चाहिये।

---

७

# शिशु-संसार

दूसरे दिन हम शिशु-उद्यानकी ओर चले। पहले फाटक मिला। उद्यानको आप यह न समझें कि कोई चार-दीवारी या लोहेके सीकचोंसे घिरा बग़ीचा होगा। इसकी वहाँ कुछ आवश्यकता ही नहीं है। न पशु है, जो भीतर घुसकर नुकसान करेंगे और न कोई चीज चुरानेवाला। द्वार बळा सुन्दर और विशाल है, इसके ऊपर दो-महला मकान है। भीतर जाते ही साथिन फातिमा—जो हमारी प्रतीक्षा कर रही थी—मिली। यद्यपि आपकी अवस्था अस्सी वर्षकी है, तब भी अपने कामको जवानोंकी भाँति करती हैं। आप २० वर्षसे विधवा है। शिक्षा समाप्तकर ब्याह करनेके बाद आपके पति श्रीहृषीकेश द्विवेदी यहाँ ही आकर बसे। दोनों ही दम्पति

तक्षशिलाके विद्यार्थी थे। पतिने चिकित्साका काम अपने ऊपर लिया था, और फातिमा दस वर्ष तक चिकित्सालयमें ही रोगि-परिचर्याका कर्तव्य-पालन करती थी। आपका बालकोंसे अगाध प्रेम था, इसीलिए पीछे आप शिशु-उद्यानमें चली आईं। तबसे आप इन स्वर्गीय पुष्पोंकी सुगन्धका आनन्द लूट रही हैं। नामसे आप यह न समझ जायें कि फातिमा मुसलमान हैं। मैं लिख ही चुका हूँ कि धर्म अब उठ गया है।

अब हम लोग आगे बढे। उद्यान बहुत ही विस्तृत और दूर तक फैला हुआ था। फूलोंमें शायद ही ऐसा कोई छूटा हो जो वहाँ न हो। बेला, चमेली, नाना भाँतिके गुलाब, चम्पा, जूही, मोगरा, कुन्द और गेंदा सभी थे। उनमेंसे बहुत-से फूल हँस रहे थे, और बहुत-से चुप-चाप हरी पोशाक पहने केवल तमाशा देख रहे थे। बीच-बीचमें कितने ही अनार, नारंगी, सेब, आम, जामन, लीची, कटहल, बैर और अमरूद आदिके पेळ भी थे। टट्टियोपर अंगूरकी लता भी फैली हुई थी। यहीं बीचमें एक बहुत भारी पीपलका वृक्ष है, जिसके नीचे लळके गर्मियोंमें खेलते हैं। यद्यपि धूप निकल आई थी, किन्तु अभी घासोपर ओस पळी हुई थी, इसलिए लळके उस बळे पक्के चबूतरेपर थे, जोकि उनके शयनागारके सामने था। धूप वहाँ पहुँच चुकी थी। उनकी सुश्रूषा करनेवाली महिलायें, यही बतला रही थीं कि आज एक बहुत वृद्ध महात्मा आनेवाले हैं। कोई-कोई बळा बालक—किन्तु तीन वर्षसे अधिकका नहीं, क्योंकि तीन वर्षके बाद तो वे विद्यालयमें भेज दिये जाते हैं—पूछ उठता था—अम्मा! क्या वह महात्मा हमारी बळी अम्मासे भी बूढ़े हैं! तब वह बतलाती—मेरे कलेजे! तुम्हारी

बळी अम्माका तो जन्म भी न हुआ था, जब वह महात्मा तुम्हारी अम्मासे भी बूढ़े हो गये थे।

एक शिशु—तो किसके बराबर हैं, हमारे गाँवमें किसीको बताओ।

माता—मेरे बच्चे! तुम्हारे गाँवमें क्या, पृथ्वी भरमें कोई उतना बूढ़ा नही।

दूसरा—अच्छा, इस पृथ्वीपर नही सही, मंगलकी पृथ्वीपर तो होगा, बुधकी पृथ्वीपर तो होगा?

माता—कोई होगा, किन्तु उसको तुमने देखा तो नही?

दूसरा—तो इसी पृथ्वीको कहाँ हमने सारा देख लिया?

माता—मेरे प्यारे! देख लोगे। अभी तो चलने लायक हुए हो, अभी तो बोलने लायक हुए हो। जब पृथ्वीका रास्ता, बोली-बाणी खूब सीख लोगे, तब सब देख लोगे।

इतनेमें दूसरी महिलाने कहा—अब काहे इतनी माथापच्ची करते हो विजय? देखो, वह तुम्हारी बळी अम्माकी बाईं ओर सफेद दाढीवाले वही महात्मा आ रहे हैं। देखो, अपना-अपना सितार हाथमें ले लो; आज देखना है, बूढे बाबाको कौन अच्छा गाना सुनाता है। मै भी सुनाऊँगी, जानकी अम्मा भी सुनावेगी, जैनब अम्मा भी सुनावेगी। इतनेमें ध्रुव बोल उठा—मैं भी सुनाउँगी। इसपर सब हँस पळी। जानकीने कहा—ध्रुव! 'मै भी सुनाऊँगी' नही, 'मैं भी सुनाऊँगा' कहो। ध्रुवने जानकीके पैरोंको कौलीमें भर मुँहको साळीमें छिपाकर कहा, 'मैं भी सुनाऊँगा'। इसपर रोहिणीने कहा—और अम्मा, 'मैं भी सुनाऊँगा'। जैनबने कहा, लो यह

दूसरी आफत आई। रोहिणी ढाई वर्षकी लळकी थी, जैनबने उसे गोदमें ले मुँह चूमकर कहा—मेरी बिटिया ! लळकियाँ ऐसे नही बोला करतीं। कह, 'मैं भी सुनाऊँगी'।

रोहिणीने कहा—हूँ ! ध्रुव भैया यही तो कहता था, तब जानकी अम्माने टोका।

जैनब—तू बेटी है न ?

रोहिणी—हाँ ! तेरी बेटी हूँ, जानकी अम्माकी बेटी हूँ, बळी अम्माकी बेटी हूँ कि ! कमाल भैयाकी तो बहिन हूँ। शफी भैया भी, देख, रोहिणी बहिन—रोहिणी बहिन कहता है। ध्रुव भैया भी बहिन कहता है। तो खाली बेटी कैसे हूँ, बेटी भी हूँ, बहिन भी हूँ।

जैनब—अच्छा बूढ़ी दाई ! तुम बेटी भी हो, बहिन भी हो, लेकिन बेटा और भैया तो नही न हो ?

रोहिणी—हाँ ! नही हूँ ।

जैनब—अच्छा ! तो बेटा, भैया, 'सुनाऊँगा' कहे तो ठीक, और बेटी, बहिन 'सुनाऊँगी' कहें तो ठीक। इतना ही नही, बूढे बाबा, पिता, चाचा सुनाऊँगा कहें तो ठीक और बूढ़ी अम्मा, छोटी अम्मा, बळी अम्मा सब सुनाऊँगी कहे तो ठीक।

इतनेमें हमलोग पहुँच गये और बात यही समाप्त हो गई। सब माताओंने अभिवादनके लिए पहले हाथ उठाया, जिसे देख बच्चोंने भी वैसा ही किया और छोटी गाळियोंमें रखे अत्यन्त छोटे बच्चोंको छोळकर हाथ सबने उठाये।

मुझे वे बच्चे सचमुच खिले हुए स्वर्गीय फूल-से जान पळे; उनके लाल-लाल होठ और गुलाबी गालोंपर अस्फुट हँसीकी रेखा थी। सबके शरीरपर एक प्रकारके गुलाबी रंगके फलालैनके कपळे थे। सबके पैरोंमें छोटे-छोटे मोजे और छोटे-छोटे सुन्दर जूते थे। सिर मुलायम टोपीसे ढँका था। स्वागत समाप्त होनेके साथ ही मैंने देखा, बालक-बालिकायें सभी—जिनकी वहाँ पहिचान होनी कठिन थी—अपने छोटे-छोटे तीन तारवाले खिलौने-सितारको ले लेकर बैठ गये। कोई मिज़्राबको उल्टा पहिनता और वह अँगुलीमें नहीं जाती, तो पासके बळे लळकेसे कहता—

'मोहन भैया! जल्दी इसे अँगुलीमें लगा दे तो।'

मुर्तुजाने एक बार कानके पास ले जाकर, तारको मारा तो 'दिम'सी आवाज आई, बस क्या था। उसने समझा, मैं ही बाजी मार ले जाऊँगा। तुरत प्रसन्नतासे फूला हुआ प्रियम्वदाके पास दौळा आया, हाथ पकळकर थोळी दूर ले जाकर बोला—

अम्मा! जरा गोदी तो ले। जब गोदी चढ़ गया, तो अपने बाजेको कानके पास ले जाकर एक बार तारपर मारा, किन्तु अबकी तार हाथसे दबा था, अतः आवाज नहीं हुई। उसे बळा आश्चर्य हुआ क्या, उसकी आशा हीपर पानी फिर गया? तो भी कहा, माँ! अभी नहीं न सुना; खळी रह, सुनाता हूँ न। प्रियम्वदा तो अभिप्रायको जान गई थी। उसने तारपरसे अँगुली जरा खिसका दी। मुर्तुजाने अबकी मारा, तो 'दिम'-से हुआ। बळा खुश होकर बोला—देख! मैं अच्छा बजाता हूँ न? प्रियम्वदाने कहा—हाँ बेटा! तू बळा अच्छा बजाता है। आज पितामहको सुना तो। इसपर

मुर्तुजाने पूछा—अम्मा ! पितामह कौन हैं ? इसपर प्रियम्वदाने बताया—वही बूढ़े-बूढ़े सफेद दाढ़ीवाले। अब मुर्तुजाने एक बात चालाकीकी कही—'माँ ! अब चुप-से बैठ जाता हूँ, नही तो विजय भैया कहेगा—अम्मासे सीख आया है।' यह कह मुर्तुजा जाकर एक जगह बैठकर, खूब आलाप लेने-जैसी शकल करके कुछ गुनगुनाते सितार छेळने लगा। देखा-देखी और कई बच्चोंने भी ऐसा ही करना आरम्भ किया।

मै गाळियोंपर बैठे बच्चोकी ओर देखने लगा। कोई पासमें खळी माताकी अँगुली पी रहा है, कोई 'आगूं'-'आगूं' कर रहा है। कोई हँसकर अपनी नई सम्पत्ति दोनो अगली दँतुलियोंको दिखा रहा है। सभी बच्चे हृष्ट-पुष्ट और, स्वस्थ थे। कोई दुबला, कुरूप और रोदू न था। मैं एक छः-सात मासके बच्चेके पास गया, तो मेरे हाथ बढाते ही वह हाथ बढाकर मानो मेरी ओर आनेकी इच्छा प्रकट करने लगा। फिर क्या था, उसको मेरी गोदमें देख बहुत-से बारी-बारीसे गोदमें चढे। सभी लळकोंकी संख्या डेढसौकी थी। देर होते देख मुर्तुजाने अब की प्रियम्वदाके पास जाकर कहा, माँ ! अब सुनाऊँ न—अब क्या देरी है ? इसपर प्रियम्वदाने कहा—हाँ ! रह जा ; अभी बुलाकर पितामहको बैठाती हूँ, तब सुनाना। सबको देखनेके बाद फातिमा ने बैठनेके लिए कहा। लळकोंहीमें हमारे बैठनेके लिए फर्शपर थोळी जगह मिली। हमारे बैठते ही, सब बालक और करीब-करीब हो गये। शिशु-उद्यानमें सब मिलकर तीस मातायें है। सभी अपनी-अपनी गोदमें तथा आस-पास बच्चोको लिये बैठ गई। डेढ़ वर्षके ऊपरवाले लळकोंने हाथ

में सितार लिया था, और छोटोमेंसे किसीने बिल्ली, किसीने कुत्ता, किसीने खरगोश, किसीने सीटी, किसीने गुळिया, किसीने लकळीके अक्षरोंके कटे अंश, किसीने कोई खिलौना, किसीने कोई खिलौना। अब बळी अम्मा बोली—

बच्चे साथियो! हमारे सबके पितामह यहाँ अपने बच्चोंको देखने आये है। अब उन्हें सब लोग अपना-अपना गुण दिखाओ। पितामह बाबा बहुत दिनपर आये हैं। पहले जानकी अम्मा भजन सुनावेगी, तब जैनब अम्मा सुनावेगी, तब देखो कौन सुनावेगा? विजय झट-से बोल उठा— मै। मुर्तुजा पहलेसे सँपर रहा था, किन्तु धोखेसे पहले न बोल सका, तो भी जल्दी-जल्दी उसने कह डाला 'मै'। जानकीने हाथमें वीणा ले गीत गाया।

गानेका कहना ही क्या था? यद्यपि भाषा बालकोंकी थी, भाव भी बालकोका था, किन्तु स्वर, लय, तान सबसे निराला था। बीच-बीचमें मैं देखता था, कई एक बच्चे बळे ध्यानसे सितारको हाथसे छेळते कुछ गुन-गुनाते हुए तन्मय थे। अब जैनबने वीणाको हाथमें लिया। विजय—उसका शागिर्द—पास बैठा था। ऐसे भी वह सावधान ही बैठा था, किन्तु अब विशेष तौरसे एक बार खळा हो आलथी-पालथी मार, ठीक जैनबकी तरह उसकी दाहिनी ओर बैठ गया। जैनबने मीठे स्वरमें एक गीत सुनाया।

गीत समाप्त होते ही ज्योंही जैनबने वीणा अलग रक्खी, विजय गोदमें जा बैठा और धीरे-से कानमें बोला—माँ, वही उस दिनवाला गीत न सुनाऊँ? जैनबने कहा—कौन सा? इसपर विजयने कुछ फुसफुसाया। जैनबने कहा—हाँ बेटा, हाँ वही। अब विजय धीरे-से मेरे पास आया, और

बोला—पितामह ! अब एक गीत मै सुनाऊँगा । मुर्तुजाने कहा—नहीं पितामह ! पहले मै सुनाऊँगा, तब विजय भैया सुनावेगा । विजयने कहा, नही पहले मैंने कहा था, पहले मै सुनाऊँगा । मुर्तुजाने फिर अपना पहला आग्रह दुहराया । अब बळी अम्माने झगळेका जल्दी निपटारा होते न देख, कहा—अच्छा, दोनो भाई मेरे पास आओ । दोनों दौळकर फातिमाकी गोदमें चले गये । तब फातिमाने विजयसे पूछा—उस दिन, विजय, जब तुम और शफी मेरे पास थे, मैं सेबका टुकळा तुझे जब देने लगी, तो तुमने क्यों लेनेसे इन्कार किया ? विजयको अम्माके हाथके फलसे इन्कारका शब्द कळा मालूम हुआ । झट गलेसे लिपटकर कहने लगा—अम्मा ! तू तो यों ही कहती है; इन्कार थोळे ही किया ? यह तो कहा था कि पहले शफीको दे, तो फिर मुझे दे । फातिमाने पूछा—अच्छा, ऐसा ही क्यो कहा ?

विजयने कहा—तैने ही नही बताया था, कि पहले छोटे भाईको देकर तब अपने खाओ । शफी छोटा भैया है, मैं बळा भैया हूँ, तो पहले कैसे खा जाता ? प्रह्लाद भैया, इब्राहीम भैया, जमशेद भैया जब विद्यालय नहीं गये थे, तब मेरे या श्याम भैयाके बिना खाये कहाँ खाते थे ?

फातिमाने कहा—हाँ ! मेरे लाल ! ठीक तो कहता है । अच्छा तो मुर्तुजा छोटा भैया है, या बळा भैया ?

विजय—छोटा भैया ।

फातिमा—तो फिर उसकी बात पहले हो कि तुम्हारी ? विजयको अपनी गलती समझमें आ गई । उसने हँसते हुए कहा, हाँ ! मुर्तुजा पहले तू

गा, तब मै गाऊँगा। बळे भैया छोटे भैयाकी बात होते देख, अब मुर्तुजाके मनने भी पलटा खाया। उसने कहा—विजय भैया बळा भैया है, पहले वह गा लेगा, तब मै गाऊँगा। विजयने कहा—मुर्तुजा छोटा भैया है, पहले वह गायेगा, तब मै गाऊँगा। अब एक दूसरा अळंगा खळा देख, बळी अम्माने कहा—मुर्तुजा! बळे भैयाकी बात छोटे भैयाको माननी चाहिए न?

मुर्तुजा—हाँ, अम्मा! माननी चाहिए।

फातिमा—तब जैसा विजय भैया कहता है, वैसा करो। अब मुर्तुजा दौळकर प्रियम्वदाके पास गया। और बोला—अम्मा! मेरे तारोंको ठीक तो कर दे। प्रियम्वदाने लेकर जरा तारको इधर-उधर खीच दिया। अब मुर्तुजा दाहिने पैरसे पालथी मार और बायेंके सहारे सितारको हाथमें पकळे, ऐसे बन बैठा, मानो तानसेन ही उतर आया हो। थोळी देर खीचने-खाँचनेके बाद बोला—अभी गीत मैंने नही सीखा है, खाली बाजा सुनाऊँगा। मैंने और विश्वामित्रने कहा—हाँ! बाजा ही सुनाइये। अब मुर्तुजाने एक बार अँगुली तारपर मारी, किन्तु वह तारतक न पहुँचकर पहले ही रुक गई। बगलवाले लळके हँसना ही चाहते थे कि उसने फिर एक बार खूब साधकर अँगुली मारी और अब 'दिम'-सी आवाज आई। प्रियम्वदा, फातिमा, मैंने और सभीने इसपर शाबाशी दी। मुर्तुजा बहुत प्रसन्न हुआ और बोला—अच्छा, अब विजय भैयाका गीत हो। विजय, जो अब तक बळी अम्माके पास बैठा था, उठकर जैनबके पास जाकर बोला—माँ! तू जरा बजा, तो मैं गाऊँ। विजयने एक-दो गीत खूब मिहनतसे याद किये थे। वह बहुधा जैनबकी गोदमें बैठकर उसके सितार बजानेपर गाया करता

था। इसीलिए अबकी फिर उसने बजानेको कहा। जैनबके दानादिर करते ही विजयने अपना गाना आरम्भ किया...

शिशुके मधुर स्वर और अकृत्रिम कंठसे निकले सरल गानने प्राणोंको प्रफुल्लित कर दिया। बारी-बारीसे दो-चार और गवैयोंने अपने करतब दिखलाये। इसके बाद अक्षरके खिलाळियोका नम्बर आया। मरियम और रुक्मिणी सबसे पहले आईं। प्रियम्वदाने लकळीके अक्षरोंके बक्सको हाथमें लेकर उसमेंसे एक नीचे रखकर कहा—बूझो यह क्या है। रुक्मिणीके अभाग्यसे उसकी ओर अक्षरकी ऊपरी लकीर पळी थी, जिससे जब तक वह विचार करे तब तक मरियमने बोल दिया—'क'। अब क्या, मरियमके आनन्दकी कोई सीमा न थी। प्रियम्वदाने कहा—बेटी रुक्मिणी, कोई परवाह नही, आओ तुम दोनो एक सीधमे पाँतीसे खळी होकर अबकी बूझो। अबकी प्रियम्वदाने फिर एक अक्षर फेंका। गिरतेके साथ दोनोंने एक साथ 'र' कहा। बळी अम्माने दोनोंको गले लगाया। अब बळी अम्मा सबके कुत्ते, बिल्ली, बत्तक, गुळिया आदि सभी खिलौनोको लेकर पाँतीसे रखकर कहने लगीं—प्रियव्रत ! खरगोश ले आओ तो। प्रियव्रतने झट खरगोश उठाकर हाथमें दे दिया। ऐसे ही वह एक-एक जानवरका नाम लेती जाती थी, और बच्चे ला-लाकर देते जाते थे।

इसके बाद सारा समाज वहाँसे उठ खळा हुआ। अत्यन्त छोटे बच्चे भी इस तमाशेमें शामिल थे। मातायें गोदमें उन्हें लिये थीं। फूलोंके पास जाकर इसकी परीक्षा ली गई कि कौन कितने फल-फूलोंका नाम जानता तथा पहिचानता है। वहाँ मौलसरीकी डालियोंमें बहुत-से पालने लटक

रहे थे ; जिनके बारेमें बताया गया कि छोटे-छोटे बच्चे इन्हींपर सोते और झूलते रहते हैं । पालनोंके गद्दे बहुत ही मुलायम थे । एक कल सब झूलनोंको धीरे-धीरे झुलाती रहती थी । हमलोग यह देख ही रहे थे कि इसी समय नौ का घंटा बजा । आज हरी घासपर भोजनका प्रबन्ध था । इसी समय बाहरसे और भी बहुत-सी स्त्रियाँ आती दीख पळीं । ये लळकोंकी जननियाँ थी । वस्तुतः यहाँ 'माता' शब्दसे उन सभी महिलाओंका ग्रहण किया जाता है, जो बालककी रक्षा, शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध करती हैं । सब प्रकारकी अनुकूलता देख, छोटे-छोटे बच्चोंको भी जननियाँ, प्रायः शिशु-उद्यानहीमें रख आती हैं । रात्रिमें वर्ष दिन तकके बच्चोंको जननी अपने पास रखती हैं । दिनमें नव-जात शिशुओंवाली मातायें यदि काम करती है, तो ग्रामहीमें, सो भी दो घंटे; बाकी समय शिशु-उद्यानहीमें बालकोंका मन-बहलाव करती हैं । शिशु-उद्यान ग्रामवासियोंका क्रीळोद्यान है, जहाँके पुष्पों और मनोरंजनकी और सामग्रियोंमें कोमल शिशु भी शामिल हैं । उनके मधुर-आलापके सुनने, उनके मनोमोहक खेलोंको देखनेकी इच्छासे कितनेही नर-नारी अपने अवकाशके समयको वहाँ व्यतीत करते हैं ।

आजके राष्ट्रका ध्येय तो यद्यपि मनुष्य-मात्रके जीवनको आनन्दमय बनाना है, और ऐसा करनेमें उसे अच्छी सफलता भी हुई है, किन्तु बालकोंके लिए प्रस्तुत की गई सुखकी सामग्रियाँ तो पुराने सम्राटोंके राजकुमारोंको भी शायद नसीब न थी । साधारणतया बालकोंको थोळा-थोळा दिन-रातमें तीन-तीन घंटेपर सात बार जलपान और भोजन कराया जाता है । पहला कलेवा उनका ६ बजे होता है, जबकि दूधके साथ ऋतुके उपयोगी

कुछ मिष्ठान्न दिये जाते हैं। इस वक्त नौ बजेके लिए खीर, कुछ फल, ऐसे ही पदार्थ थे। बारह बजे, भात-दाल, रोटी-तरकारी—जिसे पहले कच्ची रसोई कहा जाता था—का प्रबन्ध रहता है। ३ बजे फिर फल, दूध। ६ बजे भी कुछ फल। ९ बजे घीकी पकी नमकीन और मीठी चीजोंके साथ कुछ दूध भी और बारह बजे रातको फिर दूध और कुछ फल। भोजनका सिल-सिला तीन-तीन घंटेपर बराबर रहता है। परन्तु तीन समय—प्रातः, मध्याह्न और रात्रिके नौ बजे—छोळकर, पेट-भर नहीं खिलाया जाता। खाना हजम होनेके लिए लळके दौळ-धूप किया करते हैं। आँख-मिचौनी आदि पुराने खेल-कूद भी खेले जाते हैं। छोटे-छोटे फुट-बालोंको लेकर लळके खूब खेलते हैं। हरी-हरी दूबपर इन छोटे-छोटे जवानोंकी कबड्डी भी बळी भली मालूम होती है। बागमें एक अखाळा भी इनके लोट-पोट और पहलवानीके लिए है। साराश यह कि भोजन, वस्त्र, शिक्षा और शारी-रिक सुधार सभीपर पर्याप्त ध्यान दिया जाता है। हाँ! जो मातायें मैंने आते देखी थी, उन्होंने अपने नवजात शिशुओंको दूध पिलाना शुरू किया, और कितनी ही लळकोंके पासमें खिलाने बैठ गईं। खाना खा सकनेवाले लळकोंकी मातायें अपने-पराये सभी बच्चोंको साथमें लेकर समान भावसे खिलाने लगती हैं। वास्तवमें इस समयके नर-नारियोंके हृदयसे संकीर्णता निकल गई है। उनके हृदय विशाल हैं।

जन्म देनेवाली माताओंहीके लिए नहीं, उन माताओंके लिए भी जो कि उद्यानमें बालकोंकी रात-दिन सेवा-सुश्रूषा करती हैं, यह बहुत भारी मानसिक क्लेशकी बात है, कि तीन वर्ष बाद लळके दूर-दूरके

बड़े-बड़े विद्यालयोंमें भेज दिये जाते हैं। किन्तु राष्ट्रके कल्याणके लिए, और उन अपने बालकोंके हितके लिए वे सब सहन करती हैं।

भोजनके समाप्त होनेपर अब हमलोग कोठेपरके वस्तु-संग्रहालय की ओर चले। कुछ बालक तो स्वयं छोटी-छोटी सीढ़ियों-द्वारा चढ़ आये और कुछको माताओंने ऊपर पहुँचाया। विजय सभी बालकोंमें होशियार था। उसका शरीर भी हृष्ट पुष्ट था। वह जैनबकी अंगुली पकड़े हमारे साथ-साथ था।

संग्रहालयमें घुसते ही देखा, नीचे तरह-तरहके जीव-जन्तु, अस्त्र आदि वस्तुएँ रखी गयी हैं। धनुष, बाण, फरसा, गंड़ासा, लाठी, बंदूक तमंचा, भाला, कवच और खोद दीवारोंमें टँगे हैं। छोटी-छोटी तोपें भी रखी हैं। दीवारोंके ऊपर मनुष्य-जातिके बड़े-बड़े नेताओंकी जीवन-घटनाओं-सम्बन्धी बड़े-बड़े चित्र हैं। कहीं महात्मा सुक्रात प्रसन्नता-पूर्वक विषके प्यालेका पान कर रहे हैं। कहीं बुद्ध रक्तके प्यासे 'अंगुलि माल' के प्रहारका कुछ भी ख्याल न करके प्रसन्न-वदन खड़े हैं। कहीं गांधी सड़कपर कंकड़ कूट रहे हैं। कहीं इब्राहम लिंकन विपत्तियोंकी धमकीका कुछ भी ख्याल न करके मनुष्योंकी दासता हटानेके लिए बलिदान हो रहे हैं। कहीं जोन स्वतंत्रताके लिए निछावर हो रही है। कहीं अशोक युद्धके बाद साम्राज्यसे विरक्त हो रहे हैं। इसी तरह अनेक प्रकारके चित्र हैं।

मुझसे यह भी कहा गया कि बालकोंको बोलते फिल्मों-द्वारा भी बहुत-से ऐतिहासिक तथा वैज्ञानिक बातोंका ज्ञान कराया जाता है। ग्रहोंका भ्रमण, रात-दिनका होना, चन्द्रमाका घटना-बढ़ना भी उसीके द्वारा

दिखाया जाता है। बालकोंको ये सारी शिक्षायें मनोरंजन और खेलके रूपमें ही मिल जाती है। दूसरोंका काम जिज्ञासा उत्पन्न करनेकी सामग्री एकत्रित कर देना है। जब जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है, तो बालक अपनी जिज्ञासा-पूर्तिके लिए सब कुछ सहन करनेको तैयार हो जाता है। तब हर एक बात उसे जल्दी स्मरण तथा हृदयगम भी होती जाती है। उस समय ज्ञानको घोलकर पिलाने या ठूँसनेकी आवश्यकता नही होती। मैंने वस्तुओंको देखते समय बीच-बीचमें कभी-कभी किसी लळकेसे किसी वस्तुका नाम पूछा, या नाम बोलकर वस्तु दिखानेको कहा, तो बालक बळी प्रसन्नता-पूर्वक सन्तोष-जनक उत्तर देते थे। फातिमाने बताया—लळके स्वयं अँगुली पकळकर माताओंको खीच लाते है। कभी किसी वस्तुका नाम पूछते है, कभी किसी चित्रको देखकर चित्रित घटनाकी कथा सुनने बैठ जाते है। कहनेवालेसे अधिक उनको उन्हे देखने-सुननेमें आनन्द होता है। इसी समय यदि कभी भोजनका समय आ जाता है, तो बळी अरुचि-पूर्वक वहाँसे भोजन करने उठते है। यद्यपि तीन वर्ष तक उनको कोई पुस्तक पढ़नेको नही दी जाती, न लिखाया ही जाता है, किन्तु ज्ञानके साथ-साथ, उन्हें बहुत-सी सख्या तथा अक्षरो और अंकोंका बोध स्वयं ही खेलते-खेलते हो जाता है। ध्रुव, सप्तर्षि आदि कई तारोंको वह पहिचानने लगते हैं। वस्तुओंकी संज्ञाका कोष उनका बळा हो जाता है। माता, पिता, अभिभावक, और आस-पासके वायुमंडलको भी शुद्ध भाषाका प्रयोग करते देख उनकी भाषा बहुत शुद्ध होती है।

जब वहाँसे देखकर हमलोग उतरे, तो बालकोंके शयनागारकी

ओर चलनेके लिए कहा गया। जाकर देखा—छोटे-छोटे बालकोंके लिए जगह-जगह झूलने टँगे हुए हैं। बालकोके सोनेके लिए पलंगपर अच्छे-अच्छे मुलायम गद्दे भी बिछे हुए है। सर्दीमें कमरेको गर्म करनेका पूरा प्रबन्ध है। रात्रिमें बालक बहुत कम यहाँ रह जाते हैं। अधिकतर अपनी जननियों हीके पास सोते हैं। कुछ जो रहते हैं, वह अपनी उद्यानकी माताओंकी गोदमें सोते है। शयनागारकी बगलमें भोजनागार है। बगलमें पाकशाला है, जहाँ बालकोके लिए ताजा-ताजा भोजन बनता रहता है। अब ग्यारहका समय नजदीक आ रहा था, अत· उद्यानका और अवलोकन करना न हो सका। दूरसे छोटी-छोटी छतरियोके नीचे कुछ मूर्तियाँ-सी दिखाई पळीं। पूछनेपर मालूम हुआ कि वहाँ बालकोके इष्ट-देव ऐतिहासिक महापुरुषोकी सगमर्मरकी मूर्तियाँ है, जहाँ पहुँचते ही बालक 'कथा'-'कथा'की धुन लगा देते हैं। बिना उस महापुरुषकी एक दो जीवन-घटना सुने चैन नहीं लेने देते।

जानकीने घळी देखकर बतलाया कि अब ग्यारहमें पाँच मिनट बाकी है। हमलोग उद्यान-परिवारसे विदा हुए।

उस दिन उतना ही देखना था। दूसरे दिन अब यहाँसे नालन्दाको प्रस्थान करना था। विश्राम-घर लौट आनेपर विश्वामित्रसे यात्राके समय तथा मार्ग आदिपर विचार हुआ। विश्वामित्रने पूछा—क्या यहींसे सीधे नालन्दा चलना होगा?

"सीधे तो चलना होगा, किन्तु सीधे इसी अर्थमें कि रेलमें चढ़कर फिर बीचमें उतरना नहीं।"

"रेलसे चलनेमें समय कुछ अधिक लगेगा; यदि विमानसे चलना हो,

तो आध घंटेका रास्ता है।"

"इतनी जल्दी चलना भी अभीष्ट नहीं है। रेलसे चलो, तिसमें भी जो ट्रेन सब स्थानोंपर खळी होती जाय, उससे। और जाना भी उस लाइनसे चाहिये, जिसके द्वारा मैं आया गया हूँ; क्योंकि मैं रास्तेके आस-पासकी बस्तियोंके परिवर्तन आदिको देख सकूँगा। अब इधर जल्दी तो आना नहीं है, इसलिए मेरी सलाह है कि यहाँसे रक्सौल, सुगौली, मोतीहारी, मुजफ्फरपुर, पटना और बख्तियारपुर होते नालन्दा चले, किन्तु रास्तेमें कहीं विश्राम नहीं लेना है—केवल जहाँ गाळी बदले, वहाँ बदलने भरको उतरना है।"

"गाळी भी पटना ही बदलेगी। बख्तियारपुर जानेका काम नहीं, पटनासे सीधी नालन्दाको लाइन गई है। रेलवे लाइनोंमें भी बळा परिवर्तन हुआ है। अब भारतमें क्या, पृथ्वी-भरकी लाइनें एकसी ही चौळी है। वह चौळाई आपके समयके ई० आई० रेलवेसे कुछ कमकी है। इसलिए अब बी० एन्० डबल्यू० रेलवेकी छोटी लाइन, और बख्तियारपुर-बिहार वाला 'रेलका बच्चा' नहीं मिलेगा।"

"विश्वामित्र! 'रेलका बच्चा' तुमने कैसे जाना?"

"किताबोंमें देखनेसे।"

"किन्तु, इसके सम्बन्धकी कथा तुमको न मालूम होगी; सुनो। तुम तो इतिहासके पंडित ही हो। उस समयके लोगोंमें मूर्खता बहुत थी। कितने गाँवोंमें कोई चिट्ठी आनेपर दूसरे गाँवमें बँचवानेको जाना पळता था। जब मर्द ही अक्षर-शून्य थे, तो स्त्रियोंके लिए क्या पूछना? कोई देहाती

आदमी बख्तियारपुरकी उस समयकी बळी लाइनकी गाळीपर सवार था। उसने स्टेशनकी दूसरी ओर छोटे-छोटे रेलके डब्बे देखे, जो उसकी गाळीके सम्मुख वैसे ही थे, जैसे बापके सामने उसका छोटा बच्चा। उसने ऐसी छोटी रेलगाळी अब तक न देखी थी। अपने पासके किसी आदमीसे पूछा, जो स्वयं भी निरक्षर—किन्तु, तर्क-कुशल—था, कि यह क्या है। उसने कहा—'रेलका बच्चा'। पहलेने पूछा—क्या रेल भी बच्चा देती है ? उसने कहा—देख ही रहे हो; हाथीका बच्चा हाथी नहीं देखा है ? उसने कहा—हाँ, सच कहते हो, बिलकुल शकल-सूरत भी मिलती है; खाली छुटाई-बळाई हीका तो फर्क है। अच्छा, तो बेचारा 'रेलका बच्चा' भी गया, उसके बोलनेवाले भी। पटना तक जब गाळी नहीं बदलेगी तब तो गंगामें पुल बँध गया होगा।"

"१९५० हीमें।"

"अच्छा तो कल किस समय चलना चाहिये ?"

"कल साथी इस्माइलसे बात हुई थी। कहते थे कि मोहनपुर स्टेशनपर चढ़ना है। वहाँवाले भी बहुत उत्सुक है। उनका आग्रह तो एक रात आतिथ्य करनेका था, किन्तु आपकी दूसरी इच्छा देखकर उसमें बाधा नहीं डालना चाहते। कल जलपानके बाद यहाँवालोंकी अन्तिम फूल-माला लेकर आठ बजे चलना चाहिये। साढ़े आठ बजे वहाँ पहुँच जायेंगे। ग्यारह बजे मध्याह्न-भोजन करके वहाँसे बारह बजे रेलपर सवार होना चाहिये।"

"ठीक है, यही प्रबन्ध करो।"

विश्वामित्रने, इन बातोंको इस्माइलसे कहा। और इसकी सूचना

उसी दिन मोहनपुर, तथा बीचके स्टेशनों एवं नालन्दाको भेज दी गई। रेलका समय देखकर ज्ञात हुआ कि गाळी सवारी-गाळी है, जो सब जगह ठहरती जाती है। हमलोग इस तरह चलकर परसों सबेरे साढ़े छ. बजे नालन्दा पहुँच जायेंगे।

---

८

# रेलकी यात्रा

आज जलपानके पहले मेरे निवास-स्थानपर प्रियम्वदा और इस्माइल के अतिरिक्त देवमित्र, आचार्य विश्वामित्र आदि अनेक व्यक्ति आ गये थे। हमलोग साथ ही भोजनागारको गये। आज संस्थागारमें गाँवकी ओरसे फूल-माला देकर मेरी विदाईका प्रबन्ध हुआ था। जलपानके बाद हमलोग सस्थागारमें पहुँचे। वहाँ सब लोगोंकी ओरसे देवमित्रजीने मेरे लिए प्रेमोद्गार प्रगट किये। साथ ही मुझे अष्ट-धातुके पत्रपर स्वर्णाक्षरोंमें मुद्रित एक काव्यमय अभिनन्दन-पत्र दिया गया। कवयित्री वही प्रियम्वदा थी, यह अत्यन्त प्रसन्नताकी बात थी। मैने उत्तरमें ग्रामवासियोके अकृत्रिम प्रेमके प्रति अपनी कृतज्ञता तथा सन्तोष प्रकट किया।

अब सबके अभिवादन और प्रेममयी दृष्टिसे आप्लावित हो, सेवग्रामसे

मैं और विश्वामित्र विदा हुए। साथमें हमारी मोटरपर इस्माइल-दम्पति, तथा देवमित्र भी चले। हमारे चलनेकी सूचना फोन-द्वारा मोहनपुर पहुँच गई थी।

गाँवके बाहर ग्रामणी तथा अन्य सभ्य स्त्री-पुरुषोंने पहले हमारा स्वागत किया, और कहा, सब ग्रामवासी संस्थागारमें प्रतीक्षा कर रहे हैं। हमलोग मोटरसे बिना उतरे; सीधे संस्थागारमें पहुँचे। मकानोंकी सुन्दरता और ढंग बिल्कुल सेबग्राम ही सा था, बल्कि देखनेवालेको एक ही ग्रामकी भ्रान्ति हो सकती थी। विश्वामित्रने बतलाया, स्थानके संकोच, जन-संख्याकी कमी-बेशीसे गाँवकी लम्बाई-चौळाईमें भले ही फर्क पळ सकता है, किन्तु श्रेणियाँ, सळकें, संस्थागार आदि सबके नक्शे देशके सभी ग्रामोंमें एक-से होते है। जल-वायुकी विशेषतासे भी कुछ आवश्यक परिवर्तन देखा जाता है।

मोहनपुरके विषयमें मालूम हुआ, यहाँकी जन-संख्या सेबग्रामके ही बराबर है। यहाँ बर्फ बनानेका एक कारखाना है। और दूसरा व्यवसाय आस-पासके १४-१५ फलवाले गाँवोके फलोंको भिन्न-भिन्न जगहोंपर चालान करना है। इस पर्वतके फल लंका और बर्मा तक जाते हैं। इतनी दूर तक जानेमें कोई भी फर्क न पळे, इसलिए उनके रखनेकी गाळियोंमें चारों ओर बर्फ रक्खी रहती है। फलोंको ढोनेवाली मोटरोंपर लोहेके जालीदार बळे-बळे फल रखनेके बर्तन रहते हैं। एक मोटरपर ऐसा एक ही बर्तन रहता है। फलोके बोझसे नीचेवाले फलोंको बचानेके लिए बीच-बीचमें दूसरी जाली रखी रहती है। मोटर-गाळीके स्टेशनपर पहुँचते ही, उठानेकी कल-द्वारा

सारा बर्तन ही उठाकर रेलके डब्बेमें रख दिया जाता है। रेलका डब्बा ऐसे नापका बना होता है, कि पाँच मोटरोंके माल उसमें बिल्कुल ठीक अँट जाते हैं। फलोंकी गिनती देना बगीचोंवालोंका काम है। इस प्रकार कोलम्बो (लंका)के लिए आनेवाला सेब एक ही गाळीमें मोहनपुरसे वहाँ पहुँच जाता है।

मोटरसे उतरकर संस्थागारके रगमचपर पहुँचनेपर, मोहनपुरके नर-नारियोंने वैसा ही हार्दिक स्वागत किया, जैसे कि सेबग्रामवालोंने किया था। वहाँके ग्रामणीने भी मेरे विषयमें अपने सद्भाव ग्राम-वासियोंकी ओरसे प्रकट किये। मैने भी इसके लिए कृतज्ञता प्रकट की। इसके बाद फूल-माला दी गई। पीछे सबने भोजनका समय हो जाने से, भोजनागारमें आकर भोजन किया। सब जगह प्रेम और आनन्दका स्रोत उमळ रहा था। समय न होनेसे यहाँके और स्थानोको तो नही देख सका। सस्थागार और भोजनागार बिल्कुल वैसे ही थे, जैसे कि सेबग्रामके। पूछनेसे पता लगा कि शिशु-उद्यान, चिकित्सालय भी वैसे ही है। द्वार भी नदीकी ओर है और चिकित्सालयसे थोळा हटकर बर्फका कारखाना है। ये बातें स्टेशनको चलते समय मुझसे कही गई थीं। मैने बार-बार उधर इस ख्यालसे देखा कि कारखानेकी चिमनी तो दिखाई देगी, किन्तु मुझे यह स्मरण नहीं था कि काम तो बिजलीसे होता है, फिर चिमनीका क्या प्रयोजन— धुआँ-धक्कळका क्या काम?

अब स्टेशनपर पहुँचे। पहलेसे ही मालूम हुआ था कि गाळीके आनेमें दो मिनटकी देरी है। अत. हमलोग थोळी देर अतिथि-विश्राममें बैठ गये

थे; क्योंकि विश्वामित्रने बतलाया था कि अब न स्टेशनोंपर पान-बीड़ी-सिगरेट और न मिठाइयोंकी दूकान, न 'कुली चाहिये—कुली चाहिये'का तूफान, न मुसाफिरखानोंकी 'मेळिया-धसान', और न भूखे-भिखमंगोंका 'जय जजमान' है। मैंने पूछा—खैर और न सही, किन्तु मुसाफिरखानों बिना तो मुसाफिरोंको अवश्य तकलीफ होती होगी ? इसपर विश्वामित्रने बताया तकलीफ काहेकी ? खामखाह तो कोई उतरता नही। जब जहाँ जाना होता है, वही तो उतरता है। गट्ठर, बिस्तरेका तो कोई बखेळा है ही नही। अभीष्ट ग्राम समीप रहा, तो अतिथि-विश्राममें पैदल ही चलकर पहुँच गये। नही तो फोनमें दो अक्षर बोलनेपर तो मोटर आती है।

आखिर गाळी भी आ गई। आज पूरी दो शताब्दियो-बाद रेलकी सूरत देखी। लाइन तो बळी लाइनसी थी, डब्बे भी बहुत अच्छे, सुन्दर रँगे हुए थे। नई बात यह मालूम हुई कि इंजन चिन्हाई ही नही पळता था। न धुएँका फक-फक, न कालीमाईके रहनेका औंधा हौवा। इंजनके आगेका आकार हवाके धक्केको कम करनेके लिए नोकदार बना है, इंजनकी दूसरी पुरानी विशेषतायें नही है। यह सब काया-पलट बिजलीके कारण हुई है। अब कोयला-पानीसे भाफ बनानेकी तो आवश्यकता है नहीं। बिजली भीतर भरी रहती है। कुछ तो कोष बाहरसे लाकर रखा जाता है, और कुछ खुद रेलके पहियोंसे उत्पन्न बिजलीके सञ्चय करनेसे हस्त-गत कर लिया जाता है। आज-कलकी दुनिया अर्थ-शास्त्रके तत्त्वोंपर बहस करनेमें, जहाँ बालकी खाल उतारती है, वहाँ श्रम एवं, वस्तुको जरा भी फजूल नही जाने देती। मजाल क्या कि एक टुकळा सळा-गला लोहा, एक

ज़रा-सा शीशीका फूटा टुकळा, एक मामूली चीथळा, एक रद्दी कागजकी चिट व्यर्थ फेंक दी जाय। सभी चीजें गाँवके गोदाममें जमा होती रहती हैं, पीछे वहाँसे उनके उपयोग करनेवाले कारखानोंमें भेज दी जाती हैं। हाँ, बाहरसे तो नाम-मात्र ही बिजली लेनी पळती है, और पहियो-द्वारा उत्पन्न बिजलीसेही गाळी चलाना, पंखा चलाना रोशनी करना, भोजनकी गाळीमें रसोई बनाना, कमरे गर्म रखना, नहानेका पानी गर्म करना इत्यादि सब काम होते हैं। स्टेशनपर भी, न टिकटोकी है-हैं पट-पट न पुलिसकी फटकार। पुलिसके बारेमें तो इतना ही ज्ञात हुआ कि ग्राम-सभाके चुनावके साथ कुछ लोग इस कार्यके लिए चुन लिये जाते है। चोरी आदिका तो डर ही नही है। ऐसे तो शिक्षित-समाज अकारण मार-पीट आदिपर उतर नही आता, किन्तु मनुष्य-स्वभाव है—यदि कुछ हुआ, या किसी अपराधीको पकळना, या ले जाना हुआ, तो उस वक्त उन्हींको करना पळता है। वस्तुत. उन्हे पुलिस न कहना चाहिये। इनके लिए प्रयुक्त होनेवाला 'सेवक' शब्द ही ठीक है, क्योंकि वे अत्यन्त विनीत और सेवामे तत्पर होते है। रेलोमें चढ़नेके लिए टिकटकी आवश्यकता न होनेसे 'टिकट बाबू' और 'टिकट-कलक्टरो'की तो आवश्यकता ही न रही। सब जगह सन्देश तारवाले टेली-फोन या बेतारवाले टेलीफोन-द्वारा भेजा जाता है। इसलिए 'ट्र-टक'वाले बाबूका भी काम नही। समयपर लाइन साफ रखने तथा और प्रबन्ध करनेके लिए अन्य कर्मचारी होते हैं। किन्तु 'खलासी', 'पैटमैन' और स्टेशन-मास्टर सब बराबर ही हैं—बल्कि सब एक दूसरेका काम भी कर सकते हैं। कारबार के लिए यह कहनेकी तो आवश्यकता नहीं कि सब कुछ 'भारती'-भाषा ही

में होता है। फलोदी चालानका एक केन्द्र होनेसे, यहाँ चढ़ाई-उतराई तथा ढोनेका काम बहुत होता है।

इस मशीन-युगके यौवन-कालमें सब काम उन मशीनों ही द्वारा कराये जाते हैं, जिनकी नसोंमें विद्युत्‌का संचार है। मनुष्य तो सिर्फ हुक्म देता है। सवारी-गाळीके खळे होनेके 'प्लेट-फार्म'से कुछ दूरपर मालगोदाम है, जिसके पास ही पीछेकी ओर बर्फका कारखाना है। प्लेटफार्म बहुत सुन्दर, चिकना तथा आस-पास फूलोंसे सज्जित है।

स्टेशन-मास्टरसे भी परिचय हुआ। गाळीके आते ही हमलोग सवार हुए। न मेरे पास कोई बिस्तरा था, न विश्वामित्रके पास। और भी कितने ही आदमियोंको सवार होते देखा, किन्तु मानो सबने कुछ न ले चलनेकी कसम खा ली थी। सब लोगोंके पास उतने ही कपळे थे, जो उनके बदनपर—न बिछौना, न ओढ़ना, न तकिया, न ट्रंक, न लोटा-गिलास-थाली-तसला, न हुक्का-चिलम, न तम्बाकू। और बातमें तो साहेबी थी भी, किन्तु जिस प्रकार रेलके इंजनने फक-फक धुआँ फेंकना छोळ दिया था, वैसे ही आजके 'जेंटलमैनों'ने भी शायद इसी लज्जासे कि जिसे निर्जीवने त्याग दिया उसे सजीव होकर हम क्यों न त्यागें, सोच सिगार-सिगरेट छोळ दिया है।

सचमुच 'सलाई-टिकिया-दियासलाई', 'चाह गरम', 'कबाब रोटी', 'दाँतकी मिस्सी', 'सोडा-वाटर-बर्फ' आदि कोई भी पूर्व-परिचित शब्द मेरे कानोंमें न आये। गाळी क्या थी, छोटे-छोटे खिळकी-जँगलोंवाले जग-मगाते मकान थे। फर्स्ट, सेकेण्ड, थर्ड क्लासका पता नहीं। बस, एक ही

तरहकी गाळी, एक ही तरहका बिछौना—चाहे इसे 'फर्स्ट क्लास' कहिए, या 'थर्ड'। चढ़नेके लिए द्वार दूर-दूरपर थे। हमलोग इजनके पासहीके डब्बेमें चढ गये। अब गाळीमे देर न होनेसे प्रियम्वदा, इस्माइल, देवमित्र तथा मोहनपुरके सभ्य-जन विदा हुए। इजन चलानेवाले महाशयको मेरे चढनेकी खबर हो गई थी। उन्होंने घटी दे, गाळी छोळ दी। मै गाळीमें खळा हो गया। देखता हूँ, गाळीके एक ओरसे रास्ता गया है, और उसकी दूसरी ओर सोने लायक बेंचे है, जिनपर मुलायम गद्दे लगे है। मैंने विश्वा-मित्रसे कहा—पहले बुड्ढेको तुम्हारी नई दुनियाकी गाळी देख लेने दो। हम लोग इजनके पाससे चले। जिस गाळीमें जाते, वही स्वागत होता। स्त्री-पुरुष सब अपनी-अपनी बेंचोपर बैठे थे। कोई पुस्तक पढ रहा था, कोई आजका ताजा समाचार-पत्र। समाचार-पत्रोकी धूम अब भी कम नही। किन्तु 'बक' और 'कम्पनियो'का इश्तिहार नही। अफसोस, अब 'जो चाहो सो पूछ लो', 'त्रिकाल-दर्शी आईना', 'असली मुमीरा', 'फायदा न करे तो दाम वापस', 'घर बैठे एक हजार रुपया महीना कमा लो', 'मुफ्त ! मुफ्त ! मुफ्त' इत्यादि शब्दावलियोका पता नही। अखबारवालोंकी बळी-बळी व्यर्थकी सुर्खियाँ भी नही। न 'खास सम्वाददाता' अथवा 'रूटर-द्वारा'का पता है। महत्त्व-पूर्ण समाचारोपर सुर्खियाँ अवश्य हैं, किन्तु अब बाहरी तळक-भळक दिखलाकर ग्राहक-संख्या तो बढानी नही है। पत्रोके कलेवर भी भारी ओढ़ने-पहिनने लायक नही। विचारणीय विषय मासिक-पत्रोंमें आते हैं। दैनिक-पत्र केवल ससारके दैनिक समाचारोंका संक्षेपमें संग्रह करते हैं। यह प्रत्येक प्रान्तके मुख्य स्थानसे उसीके नामसे निकलते हैं।

शायद यह कहनेकी आवश्यकता न होगी कि वह आवश्यकता अनुसार स्थान-स्थानपर उतनी सख्यामें भेजे जाते हैं, जिसमें कि प्रत्येक नर-नारी आसानीसे पढ सकें। काम हो जानेपर, कागजके कारखानोंमें जाकर ये पुराने अखबार सादे कागज बन जाते हैं, और फिर दूसरी बार अपने कलेवरको काला करानेको तैयार हो जाते है।

मासिक पत्र बळी तळक-भळकसे, आवश्यकतानुसार चित्रोंसे सुसज्जित होते हैं। फोटोग्राफीका भी अब यौवन है। इतना ही नहीं कि इससे आकृतिके साथ जैसे-का-तैसा रग ही उतरता है, बल्कि अब चित्र भी एक सेकण्डमें बेतार-के-तार-द्वारा पृथ्वीके दूसरे छोर पर ज्यो-के-त्यों उतर कर समाचार-पत्रोमें आ जाते है। मै जिस दिन सेब-ग्रामके बागमें आया, उसी दिन मेरा चित्र संसारके समाचार-पत्रोमें मुद्रित हो गया। प्रत्येक विज्ञानके पृथक्-पृथक् मासिक पत्र निकलते हैं।

हम लोग अब रेलगाळीके पुस्तकालयमें पहुँच गये थे। यहाँ पत्रो और पत्रिकाओंका ढेर पळा हुआ था। यद्यपि दो-तीन आलमारियाँ पुस्तकोकी भी थीं, किन्तु पत्र-पत्रिकायें ही अधिक। ज्योतिष, गणित, अध्यात्म, इतिहास, भाषा-विज्ञान, मनोविज्ञान, दर्शन, साहित्य, विद्युत, कृषि, आयुर्वेद, वनस्पति, प्राणि आदि सैकळों विज्ञानोकी पृथ्वीके भिन्न-भिन्न छोरसे निकलनेवाली पत्रिकायें वहाँ मौजूद थीं। नर-नारी कहीं किसी दार्शनिक तत्त्व पर आलोचना कर रहे थे; कहीं नवीन समाचारको लेकर आनन्द या शोक प्रगट कर रहे थे; कहीं साहित्य-सिन्धुमें गोते लगा रहे थे, तो कहीं उपन्यास ही पढ़-सुन रहे थे; और कहीं संगीत-मंडली अभी

हुई थी। पुस्तकालयकी गाळीके बाद भोजनालय है। यात्रियोंको घरकी तरह यहाँ बना-बनाया भोजन मिलता है। भोजनका समय वही यात्राम भी है। घंटा बजते ही लोग तैयार होकर बेंचों पर बैठ जाते हैं। भोजनालयसे लकळीके तख्ते पर भोजनकी सामाग्रियाँ परोसी हुई बिजलीके द्वारा सरकती हुई वहाँ पहुँच जाती हैं। भोजन खानेके बाद सब तख्ते बिजली-द्वारा ही लौटा लिये जाते हैं। पानी पीने तथा नहानेके नल जगह-जगह लगे हुए हैं। पायखानोंका प्रबन्ध गाळीके अन्तमें है। ये भी बळे साफ हैं, किन्तु पहलेकी रेलोंकी तरह जहाँ-तहाँ पायखाना गिर नहीं पळता, उसके जमा होनेका स्थान है और खास स्टेशनों पर पायखानोंके नलोंमें गिरा दिया जाता है। शोधक तो जल-देवता है ही।

भोजनालयके कमरेको पारकर, हमलोग आगे चले, कई लोग बैठनेका आग्रह करते थे। किन्तु मैं यह कह देता था कि जरा आपके युगकी गाळी तो अच्छी तरह देख लूँ। आगे चलकर एक गाळी बीमारोंकी थी। इसमें पाँच-छ· बीमार बळे आरामसे लिटाये गये थे। उनकी सेवामें दयामयी दाइयाँ तत्पर थीं। कोई किसीको पुस्तक पढ़कर सुनाती थी; कोई बात-चीतसे मन-बहलाव करती थी। पासकी मेज पर गर्म रखनेवाले बर्तनोंमें दूध, और निकट ही सेब, अगूर आदि ताजे-ताजे फल अच्छी तरह सजाकर रखे हुए थे। इन रोगियोंमेंसे दो तिब्बतसे आ रहे थे। चिर-रोगी होनेसे उनकी विशेष चिकित्साके लिए तक्षशिला ले जाया जा रहा था। तीन और रोगी नेपाल प्रान्तके भिन्न-भिन्न स्थानोंके थे। उन्हें वैद्योंने समुद्र-यात्राकी सम्मति दी थी। चिकित्सा और सुश्रूषाका समुचित प्रबन्ध होनेसे रोगीकी

आधी पीळा तो ऐसे ही भूल जाती है। भला यह आराम पहले जब बळे-बळे धनिकोके लिए भी दुर्लभ था, तो सामान्य जनोकी बात ही क्या ?

सब गाळियोकी एक बार सैर करके हमलोग एक स्थान पर आकर बैठे। उस समय मुझे ख्याल आया कि एक यह समय है और एक वह भी समय था जब संसारमें सबसे कळी मिहनत करनेवालेको ही सबसे अधिक दुःख था। बेचारे परिश्रमी किसान-मजदूर रेलमें भी जब चढ़ते, तो उनके लिए खळे होनेके लिए पर्याप्त स्थान न था। एक-पर-एक लोग भेळोकी तरह जेठकी कळी गर्मीमें भी कस दिये जाते थे। उस भीळमें कही बच्चा दबता रहता था कही औरत। कुछ उज्र करने पर कहा जाता था—इतनी भीळमें जाते क्यो हो, दूसरी गाळीमे क्यो नही जाते ? किन्तु दूसरी गाळी आने तकमें तो किसीका मुकदमा बिगळता था, किसीकी लगन बीतती थी, किसीका बन्धु मरता था और किसीका खर्चा खतम होता था। और यह सब सह भी ले, तब भी कौन जानता है कि अगली गाळी खाली आयेगी, जिसमे टाँग-पसारे सोते जायँगे। यह बैठने-सोनेका आराम, यह पढ़ने-लिखने-का सुभीता, यह खाने-पीनेकी बेफिक्री पहले कहाँ नसीब थी ? पैसेवालोकी पाकेट भी तो चलते-चलते गायब हो जाती थी।

हमारे पासहीमें एक मध्यमवयस्का महिला बैठी हुई थी। पूछने पर पता लगा, आप आन्ध्र-विश्वविद्यालयकी आचार्या हैं। आज छ. मासके बाद एक बळी यात्रासे लौटी जा रही हैं। आपकी यात्रा समुद्र, आकाश, पृथ्वी तीनों द्वारा हुई है। आप मद्राससे जहाजमें सँवार हुईं; वहाँसे लंकामें दो-चार दिन प्रसिद्ध-प्रसिद्ध स्थानोको देखती हुई जावा और बाली-द्वीपोंको

गईं; फिर आस्ट्रेलिया। मैंने उनसे पूछा, आस्ट्रेलियामें क्या केवल गोरे लोग बसते हैं? उन्होने कहा, अब कही केवल गोरे, या काले, या पीले, या लाल नही बसते। सभी जगह सब रंगके लोग बसते है। मुझे आपका परिचय है। मैंने 'ल्हासा'में आपका चित्र और वृत्तान्त पढा था। आप बीसवी शताब्दीकी बात करते है। उस समय भारतमें ऊँच-नीच भावोंसे भरी नाना जातियां थी; वैसे ही, दूसरे देशोमें भी स्वार्थ-पूर्ण वर्ण-भेद, वर्ग-भेद थे। अब उनका कहां पता है? हमारे आन्ध्र प्रान्त, तामिल प्रान्त, अथवा केरल प्रान्तमें यदि पहलेकी बातें स्मरण करके पूछें—क्या अब भी तुम्हारे यहां 'परिया' है, अब भी तुम्हारे यहां 'थीया' है, अब भी वह 'अय्यर' और 'नम्बूदरीपाद' है, जो 'थीयो'की छायासे अपवित्र हो जाते थे?

मैं—तो क्या, आपके कहनेका मतलब यह तो नही कि अब यह बातें बिलकुल नष्ट हो गईं?

महिला—नष्ट ही नही हो गईं, कबकी भूल भी गईं। अब वह बातें इतिहासके जिज्ञासुओके लिए पुस्तकोमें रह गई है। अब आस्ट्रेलिया आदि किसी भी स्थानमे पुराना पक्षपात और दुराग्रह नही। सब जगह आगत अतिथिकी वैसी ही पूजा होती है, जैसी अपने देशमें।

मैं—मैं आपको प्राय हिन्दी अथवा शुद्ध 'भारती' भाषा बोलते देख रहा हूँ। आपके देशकी 'इकळे'-'तिकळे' वाली बोली तो इधरवालोंके लिए कोई अर्थ ही नहीं रखती थी। आपने यह भाषा कब, और कहाँ सीखी?

महिला—प्रत्येक भारतीयकी 'भारती' तो मातृ-भाषा है। मेरी भी यह मातृ-भाषा ही है।

मैं—तब क्या आन्ध्रवालोंकी 'तेलगू' मातृ-भाषा नहीं?

महिला—यह नही कह सकतीहूँ। तेलगू भी लोग जानते हैं। बहुत दिनों तक अर्थात् २०६६ ई० तक, उनका आग्रह था कि हमें तेलगूको मातृ-भाषा तथा सर्व व्यवहारोपयोगी बनाये रखना चाहिये। किन्तु सारे भारतकी उपयोगी राष्ट्रीय भाषा होनेसे 'भारती' तो पढनी ही पळती थी, नही तो मनुष्यको कूप-मंडूक बन जाना पळता। लोगोने इस दोहरे परिश्रमके लिए सबका बहुत-सा समय बरबाद करना उचित न समझा। उधर जब सार्वभौम राष्ट्र होनेसे पूर्व ही एशियावालोने एक राष्ट्र बनाकर सार्वभौमीको अपनी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनाई, तो लोगो पर और प्रभाव पळा। अब 'भारती'के साथ सार्वभौमीका भी जानना प्रत्येक नागरिकको अनिवार्य हो गया। इसलिए 'भारती' ही मातृ-भाषा हो गई। यह केवल यहीं नही, 'तामिल', 'केरल', 'कर्नाटक'में भी।

मै—तो क्या आपने अपनी प्राचीन मातृ-भाषाओकी चिताओपर 'भारती'का महल उठाया है?

महिला—भाषा तो अस्थिर होती है। कौन भाषा है, जो दो सौ वर्ष तक एक रूपमें रह गई? हमारे पळोसमें ही 'तमिलनाड' है। पहले वहाँ ८–१० शताब्दियोंसे भी पूर्व जो भाषा थी, वह आपकी बीसवी शताब्दीकी 'तमिल'से पृथक् 'शनूतमिल्' कही जाती थी। उस समयके लोगोंके लिए बिना पूरा श्रम और समय लगाये उसका समझना असम्भव था।

मैं—तो आपकी रायमें भाषा और उसके साहित्यकी रक्षाका प्रयत्न ही निरर्थक है?

महिला—नही, मै यह नही कहती । भाषाकी भी यथावसर रक्षा होनी चाहिये। साहित्यको तो अक्षुण्ण रखना चाहिये। किन्तु केवल भाषाकी रक्षाके लिए मनुष्य जातिकी एकताका बलिदान नही किया जा सकता। उसकी रक्षाका काम जातिके कुछ आदमी कर सकते हैं। जिनकी भाषा-विज्ञान, इतिहास अथवा विशेष साहित्यकी ओर स्वाभाविक रुचि हो; यह भार उनके ऊपर निश्चिन्तता-पूर्वक छोळ देना चाहिये। संसारका उपकार अनेक भाषाओको सुदृढ करनेमें नही है, बल्कि सबके आधिपत्यको उठाकर एकके स्वीकार करनेमें है। जैसे अन्य हितके कामोमें मनुष्योका पूर्वका पक्षपात बाधक होता था, वैसे ही यह भी एक प्राचीन निरर्थक पक्षपात था। यह भ्रमपूर्ण पक्षपात ही तो था, जो भारत बीसवी शताब्दीमें नाना जातियोमें विभक्त हो आपसहीमे कट-मर रहा था। यह वही अन्धविश्वास था, जिसके कारण इंग्लैण्ड 'दशमलव' तथा 'मात्रिक' परिमाणोको फ्रासका समझ कर, उसे अधिक उपयोगी और शुद्ध होने पर भी कबूल न करता था। अब उस पक्षपातका ससारमे स्थान नही। अब संसारके सभी स्थानोमें अर्थ-शास्त्रीय दृष्टि एक है। एक समय था कि भारतमें ही हिन्दी-उर्दूका झगळा था। समय आया कि वह झगळा मिट गया और दोनोकी प्रतिनिधि 'भारती' भाषा भारतकी राष्ट्रीय भाषा हुई। फिर बळी मुश्किलसे सारे प्रान्तोने देवनागरी वर्णमालाका प्रान्तीय भाषाओंकी वर्णमाला होना स्वीकार किया। अन्तमें तो अब सबने 'भारती' भाषाको ही मातृ-भाषा बना लिया। पुरानी भाषा अब भी पढ़ी जाती है। अब भी उसके साहित्यका रस लिया जाता है, किन्तु उस संकीर्णताके साथ नहीं।

सभी तो साहित्य-सेवी नहीं होते। जिनकी रुचि होती है, उनके पढ़नेका पूर्ण प्रबन्ध है। इस समय कितनी आसानी है? मुझे सार्वभौमी भाषाके द्वारा आस्ट्रेलिया, सम्पूर्ण एशियामें घर-सा ही मालूम पळा।

मैंने उक्त विदुषीके इन भावोंको बळे ध्यान-पूर्वक सुना। पूछने पर मालूम हुआ कि आपका नाम गार्गी है। मैंने यात्राके बारेमें पूछा तो पता लगा कि आप आस्ट्रेलियामें कुछ दिन रहकर 'बोर्नियो'होती हुई 'निप्पोन्'(जापान) गईं। मैंने बीचमें यह भी पूछा था कि आस्ट्रेलियामें आबादी कितनी है। उन्होंने बताया, १६ करोळ। चीन, भारतवर्ष और जापानकी घनी आबादी-वाले देशोंके बहुतसे लोग वहाँ जा-जाकर बस गये हैं। पहलेके इंग्लैण्ड, आदि देशोंके बसे हुए भी लोग हैं, किन्तु उनकी सख्या इतनी आबादीमें बहुत कम है। यह भेद भी ऐतिहासिकोंके महत्त्वका है। वहाँवालोंके लिए तो कोई भेद ही नहीं। मैंने पूछा—'फूजीयामा'को भी निप्पोन्में देखा? वहाँ १९२३ के चन्द घंटोंके भूकम्पने सात लाखकी बलि ले ली थी? उत्तरमें उन्होंने 'हाँ' कहा। पीछे वह नानकिन चली आईं। फिर पेइपिंगसे मंचूरियाके कई स्थानोंमें घूमती आप साइबेरिया पहुँचीं। वहाँसे उत्तरी ध्रुवका दर्शन करती हुई साइबेरिया मंगोलिया, और तिब्बत होती अब अपने विद्यालयको लौट रही हैं। ज्योतिष-शास्त्र और भूगोलसे आपका बळा प्रेम है। इन्हीं दोनोंके सम्बन्धमें आपने यह बळी यात्रा की है। हाँ, साथमें आपके दो और अध्यापक रहे, जिनमें एक 'विश्वभारती'के प्रोफेसर हक और दूसरे अलीगढ़ विश्व-विद्यालयके प्रोफेसर विश्वनाथ। वह दोनों सज्जन भी सामनेकी बेंचों पर बैठे थे। पहले उन्होंने भी अभिवादन किया

था, किन्तु मुझे कुछ मालूम न हुआ था। बात यह है, वस्त्र तो अब सबके एकसे होते है, जब तक विशेष वार्तालाप न हो, अथवा कोई परिचय न कराये, तब तक कैसे जाना जा सकता है कि कौन किस योग्यताका है?

आज-कलके जेल भी दूसरे ही प्रकारके है। बीसवी शताब्दीके जेलोसे इनका मुकाबिला क्या? क्या यहाँके कैदियोकी जरा-जरा-सी बातमें गाली और जूतोसे पूजा होती है? ऐसी बात सुनकर तो आजके लोग पहलोकी बुद्धिपर अफसोस करेंगे। आजकल तो कहा जाता है, अपराध भी मनुष्य किसी मानसिक रोगके कारण करता है; उसकी चिकित्सा होनी चाहिये—उसको शिक्षा देकर सुधरनेका अवसर देना चाहिये। भला वह लोग क्या शिक्षा देगे, जिन्हे कैदी अपने ही जैसा चोर-डाकू जानते हैं? इसीलिए आज-कलके जेलर होते है अत्यन्त नम्र, मानस-शास्त्र और आयुर्वेदके पारंगत विद्वान्। कितने ही अपराधियोके लिये शल्य-चिकित्साकी भी आवश्यकता पळ जाती है। रोगीको जिस प्रकार सावधानी और शान्तिसे रखा जाता है, वैसे ही अपराधीको। दड केवल इतना ही समझिये कि उसकी पूर्ववत् स्वच्छन्दता नही रहती। भोजन वैसा ही सुन्दर, वस्त्र वैसा ही बढिया, मकान-शिक्षा आदिका प्रबन्ध भी अत्युत्कृष्ट। वहाँ ऐसे शिक्षक-जेलरकी शिक्षामें रहकर वह सुधर जाता है। पीछे फिर अपने कार्यपर जाता है। जैसे आजकल रोगियोकी संख्या अत्यन्त अल्प है, अपराधियोकी संख्या तो उससे भी अल्प है। बात यह है कि धनी-गरीब तो कोई है नही, जो वस्तु, भोजन, वस्त्र और गृह-सामग्री एकके पास है वही दूसरेके पास भी है। जब पर्याप्त तथा वैसे ही सुंदर कोट-कमीज मेरे पास

हों, जैसे कि दूसरोंके पास, तो मैं क्यों चुराऊँगा? पेट-भर खानेके लिए सभी स्वादिष्ट पदार्थ मुझे, मेरी स्त्री, मेरी लड़की और मेरे लड़कोंको बिना चोरी या दगाबाजीके मिलते हैं, तो मैं वैसा क्यों करने जाऊँगा? कोई चीज चुराकर बेचूँ, तो पहले दुनियामें न खरीदार ही है; न रुपया। रुपया लेकर भी क्या करना है? बुढ़ापेके लिए? सो तो राष्ट्रकी ओरसे बूढ़ोंके लिए परिचारक तथा सब प्रकारके आरामका वैसा ही प्रबन्ध है, जैसा रोगियोंके लिए। फिर रुपयोंकी आवश्यकता? बेटों-बेटियोंके लिए? यह भी नहीं। तीन वर्ष तक राजकुमारोंकी तरह उनके पाले जानेका वर्णन हो चुका है। तीनसे बीस वर्ष तक भी उसी प्रकारके आरामके साथ उत्तम-से-उत्तम शिक्षासे भूषित होनेका प्रबन्ध राष्ट्रकी ओरसे है ही। शिक्षा-समाप्तिके बाद योग्य विदुषी कन्यासे इच्छानुसार ब्याह, बिना बारात, जेवर, दहेज आदिके झगड़ेके हो जाता है। तब रुपयेसे मतलब!

इस प्रकार चोरी तो आजकलके शासनमें असम्भव है। जमींदारी, काश्तकारी, माल-मिल्कियत किसीकी है ही नहीं, सभी राष्ट्रीय सम्पत्ति हैं। फिर दीवानी-अदालतोंका खात्मा ही है, साथ ही जमीनके दखल-बेदखल आदिके झगड़े, मार-पीट, खून-खराबीका होना भी बन्द है। आबकारीका कानून, फैक्टरीका कानून, सिक्कोंका कानून, स्टाम्पका कानून, हथियारोंका कानून इत्यादि हजारों कानूनोंकी जड़ें ही कट गई हैं। इनमेंसे बहुत-सी चीजोंका संसारसे ही नाम उठ चुका है। अब अपराध यह हो सकता है कि बातके लिए कहीं तकरार होकर झगड़ा हो जाय।

स्त्री-पुरुष दोनों स्वतंत्र हैं। दोनोंका पति-पत्नी-बंधन प्रेमका है।

पतिका पत्नी पर उतना ही अधिकार है, जितना कि पत्नीका पति पर। वह पुरुष होनेसे उसपर कोई विशेष अधिकार नहीं रखता। ब्याह भी दोनोंके युवा होनेपर, सुशिक्षित तथा सुचतुर होनेपर, दोनोंकी पूर्ण स्वीकृतिपर, बिना किसी दबाव और बिना किसी धनादिके प्रलोभनके होता है। ऐसी अवस्थामें दोनोंका प्रेम स्थायी होना ही स्वाभाविक है। किन्तु यदि निर्वाह न हो सके—किसी कारणसे अथवा पहले जल्दी करनेसे भूल हुई—तो अब भी दोनों स्वतन्त्र हैं। दोनोके रास्ते खुले है। दोनो ब्याह-सम्बन्ध-विच्छेद करके अपना-अपना रास्ता ले सकते है। उनके वैसा करनेमें समाजकी ओरसे कोई बाधा नही।

इतना होने पर भी यदि बदचलनीसे कही झगळा, फसाद या मार-पीटका मौका आ जाय, तो इससे भी जेलके लिए कैदी मिलते है। अनिवार्य तथा बहुत ताकीद करने पर राष्ट्रीय नियमोंको न पालन करनेपर भी मनुष्य जेल भेजा जा सकता है। संक्षेपमें अपराधी होनेके यही तीन-चार कारण है।

इनके देखने तथा बीसवी शताब्दीके अपराधोसे मिलानेहीसे ज्ञात होगा कि कैदी कितने रह जायँगे। मालूम हुवा, नैपाल प्रदेश भरमे एक ही जेल है, जिसमें कुल ५० कैदी हैं। बिहारमें भी एक ही जेल है, जिसके कैदियोकी संख्या कभी सौसे ज्यादा नही हुई। ऐसी बात भारतहीके प्रान्तों-में नहीं, दूसरे देशोंमें भी है। पुराने जमानेमें चोरीके लिए बळे-बळे दण्ड मुकर्रर किये गये थे, जिसका कि अस्तित्व ही शासन-प्रणालीके दोष पर निर्भर था। दूसरोंके परिश्रमकी कमाईको कानूनकी भूल-भुलैयामें डाल

कर हळप जानेवाले तो महाजन, महापुरुष; और रात-दिन खून-पसीनेको एक कर अपने और अपनी सन्तानका पेट न भरनेसे लाचार होकर, उसी पराये मालके हळपनेवालेकी लूटकी ढेरीसे अपनी प्राण-रक्षा भरके लिए थोळा ले लेना बहुत भारी अपराध समझा जाता था। बात यह है कि उस समयकी धारणा ही दूसरी थी। दो-चार आदमियोंको लेकर दूसरेका धन हरनेवाले चोर, सौ-पचास लेकर दिन दहाळे लूटनेवाले डाकू, दस हजार लेकर दूसरोंकी जन्मभूमि छीन लेनेवाले विजयी—दिग्विजयी—कहलाते थे। सिकन्दर और एक डाकूमें तात्विक दृष्टिसे तो कोई भेद नहीं; केवल परिमाणका भेद था। परिमाणके भेदसे तो कुछ और ही होना चाहिये था, क्योंकि थोळे पापवाला थोळा पापी, बळे पापवाला बळा पापी होता है। इस तरह तो सिकन्दर आदि बळे चोरोंकी बळी निन्दा होनी चाहिये थी, किन्तु वह दुनिया ही दूसरी थी। चोर कौन कहे, उलटे लोग उन्हे प्रतापी, महाप्रतापी, दिग्विजयी, विश्वविजयी कहने लगे। साराश यह कि उस समयके अनेक अपराध कृत्रिम तथा बलात्कारसे कराये जाते थे।

हमारी गाळी दनादन चली जाती थी। कही चढ़ाई और कही उतराई, तो कही पहाळकी सुरंगमें होकर रास्ता था। अभी आस-पासके पहाळों पर अनेक प्रकारके फलोका ही बागीचा था। आखिर कुछ घंटों चलनेके बाद हमारी गाळीने पहाळ छोळा। अब घने जंगलोंका रास्ता था। पुराने-पुराने शालके ऊँचे और मोटे वृक्ष थे। बीच-बीचमें और भी बळे-बळे दरख्त थे। मुझे मालूम था ही कि इस तराईमें बाघ और हाथी कई तरहके जानवर होते थे। मैंने उनके बारेमें पूछा। मुझे बतलाया गया कि इन जंगलोंमें उन

हिंसक जीवोंका नाम नही। सारे हिंसक जीव मार डाले गये हैं। उनके मूलकी रक्षा प्राणि-संग्रहालयोंमेंकी जाती है; जो दो-चार नर और मादा रखे गये हैं, उनके खानेके लिए नकली मासके टुकळे दिये जाते है, जिन्हें वह पहिचान नही सकते। हाथियोको भी फँसा-फँसा कर जंगल खाली कर दिया गया है। उनका भी जाति-उन्मूलन-क्रियासे प्राय: विनाश-सा ही कर दिया गया है। अब केवल प्रदर्शनी तथा विद्याके उपयोगके लिए कुछ रखे गये है। अब यह जंगल निष्कटक हो गया है।

अभी दो-तीन कोस गये होगे कि एक स्टेशन आया। यहाँका माल-गोदाम बहुत भारी तथा यहाँसे दो लाइनें जगलोकी ओर गई थीं। उनके बारेमें पूछनेपर मालूम हुआ कि ये लाइनें दूर तक गई है। यहाँसे पूर्व, थोळी दूरपर, एक बळा भारी ग्राम है, जिसका नाम कागज-ग्राम है; जिसमें दस हजार लोग बसते है। बस्तियोंका ढग दूसरे ग्रामोका सा ही है। वहाँके निवासियोको भी किसी प्रकारकी सुख-सामग्रीसे वचित होना नही पळता। कागज-ग्राममे कागजका बळा भारी कारखाना है। लकळियोके काटने, टुकळे करने, उठाकर कारखाने तक लाने, चीरने-फाळने, पकाने-गलाने, 'पल्प' तैयार करने, कागज बनाने, काटने, तह लगाने, आदि सभी कामोके लिए बिजली-द्वारा चलाई जानेवाली मशीनोंका प्रयोग किया जाता है। यहाँसे कागज तैयार होकर छापाखानोमें जाते है। रद्दी कागज, सळे-गले कपळों आदिसे भरे रेलके डब्बे मैंने स्टेशनपर खळे देखे जिनके बारेमें मालूम हुआ कि यह सब कागज बनानेके लिए जा रहे हैं। पता लगा कि कागज बनानेके सभी उपकरण, बाँस, घास, लकळी आदि यहाँ प्रचुर

परिमाणमें है। अतः यहाँ इसका कारखाना खोला गया है। वहाँसे आगे लकळीके भी कारखानोवाले ग्राम हैं। जिनमें मशीनों-द्वारा लकळीके तख्तोंको चीरकर चौखट, किवाळ, चौकी, तिपाई आदि सभी काठके सामान बनाये जाते हैं।

अब हमारी गाळी और आगे चली। मैंने मन-ही-मन विचार किया, अब थोळी देरमें जंगलसे पार हो जायेंगे। किन्तु इतनी देर होने पर भी देखा, अभी तक गाळी जंगलहीमें जा रही है। अब जगलमें ज्यादा वृक्ष 'सागौन'के थे। मैने पूछा, ऐसी लकळियाँ तो इधर नही देखी थी। विश्वा-मित्रने कहा—यह लकळियाँ ही नहीं, पहले यहाँ खेत और गाँव बसे थे। यह सौ वर्षसे कुछ ऊपरकी बात है जब यहाँ 'सागौन'का जंगल लगाया गया, अब तो इनसे लकळीकी चीजें बनानेवाले यहाँ कई ग्राम है। इस तराईके लकळी और कागजके कारखानोके बने लकळी और कागजसे आधे भारतवर्षका काम चलता है। इस जंगलसे वृष्टि होने और आनेके पहाळोमें तरावट आनेमे भी मदद पहुँची है। तराईके सागौन और शालकी लकळी बळी दृढ़ और सुन्दर होती है।

गाळी बीचमें दो-दो, तीन-तीन मिनट रुकती दनादन चली आ रही है। जहाँ-तहाँ स्त्री-पुरुष मेरे आनेका समाचार सुनकर देखनेके लिए स्टेशनोपर आये हुए हैं। उतरनेका तो कोई काम नही। खिळकीपर बैठा ही हुआ हूँ, सफेद बळी-बळी दाढ़ी खुद ही परिचय करा देती है। गाळी रुकते समय थोळी देरके लिये हमारी बात कट जाती है; नहीं तो बराबर गाळीकी तरह वह भी चलती ही जाती है। अब हम लोग जंगलोंके बाहर

चले आये। अब सळककी दोनो ओर हरी-हरी घासोंका मैदान है। मैंने पूछा—क्या जेठ मासमें भी अभी घासें हरी है। क्या तुम लोगोंने और चीजों-की भाँति बादलोको भी तो अपने काबूमें नही कर लिया ? अध्यापक हकने कहा, हाँ; अब वृष्टि कराना भी हमारे हाथमें हो गया है; आवश्यकता पळने पर विज्ञान-द्वारा वृष्टि कराई जाती है। किन्तु, यहाँ तो समय-समय पर हरी घासोको जगह-जगह फैले हुए नलोके जलको खोलकर सींच दिया जाता है। वृष्टि ऊँचे, सूखे पर्वतोको हरा करनेके लिए कराई जाती है। नही देख रहे हैं, भूमि कैसी समतल, पानीके तलके बराबर है ? मैने पूछा, बरसातका पानी भूमिको काट-काटकर ऊभळ-खाभळ नही बना देता ? इसपर उन्होने कहा, पानीकी चलती तो वह ऐसा करनेमें कब चूकता, किन्तु अब उसका रास्ता निर्दिष्ट है। कितना ही पानी बरसे, उन पक्के रास्तो अथवा नलों-द्वारा बळे नालोमे होकर नदीमें पहुँचा दिया जाता है। रेलकी सळकको नही देख रहे है, कदम-कदमपर लोहेके पुल बँधे हुए है। जलके रास्तेपर कही जबर्दस्ती नही है।

अब गायोके झुण्ड चारो ओर बिखरे हुए बळे सुन्दर दिखाई देने लगे। अब तक तो सळकके किनारे तार नही गळे थे, किन्तु अब तो तार भी बराबर गळे हुए थे, जिसमें गायें चलती गाळीके आगे न आ जायँ। बहुत ही सुन्दर और बळी-बळी गायें थी। जिनकी सूरत देखते रहनेको तबियत चाहती थी। गायोंसे बछळे अलग करके दूर चराये जा रहे थे। हरी-हरी घासोको बळे प्रेमसे गायें चर रही थी। मैंने कहा, अब दाना-खलीकी इन्हें क्या आवश्यकता ? इसपर अध्यापक विश्वनाथने कहा—

तब भी खली, मक्काका दाना, कण, और चोकर इन्हें दिया जाता है। सायंकालको थानपर जाते ही इनको यह स्वादिष्ट ब्यारू कराया जाता है। मैंने जगह-जगह देखा कि लम्बे-लम्बे पक्के हौजोंमें साफ पानी लबालब भरा हुआ है। पानी इनमें बराबर आता और निकलता रहता है। यहाँ गायें आकर पानी पीती हैं; जगह-जगह हरे-हरे वृक्षोंकी छाया है। कुछ गायें वहाँ भी बैठी जुगाली कर रही हैं। गायोंके झुंडमें कई भीमकाय साँढ़ भी दिखाई दिये। इनमें कुछ चर रहे हैं, और कुछ 'अब्-माँ' कर रहे हैं। साँढ़ोंके देखते ही मुझे एक बात स्मरण आगई और मैंने अध्यापक हकसे पूछा, आप लोग खेत तो बिजलीके हलोंसे जोतते हैं; और गाड़ी भी बिजलीहीसे चलाते हैं; बैलोंके खानेवाले भी नहीं। साँढ़ रखनेको सौपर दो-तीन बैलोंकी आवश्यकता पड़ती होगी, फिर इतने बछड़े, जो पैदा होते होंगे, किस काममें आते हैं?

हक—कितने बछड़े? हमलोग पैदा ही इतने बछड़े होने देते हैं, जितने साँढ़ोंकी आवश्यकता है। बाकी बछियाँ ही पैदा कराई जाती हैं।

मैं—तो क्या अब आपने यह विद्या भी पा ली है?

हक—हाँ, जो-जो आवश्यकता और कठिनाई मार्गमें आती गई, हमने परिश्रम किया और उसका हल भी मिल गया।

मैंने हँसते हुए कहा—भाई! तुमने सब बातोंमें कमाल किया। सब कठिनाइयोंको सहल और असम्भवोंको संम्भव बना दिया। तुम शायद एक भी असम्भव बात न जानते होगे। यही गायें हैं, जिनको लेकर २०वीं और उससे पूर्व शताब्दियोंके हिन्दू-मुसलमान प्रलय तक एक दूसरेके खूनके प्यासे बन बैठे थे।

जितनी पिछले गो-ग्राममें गायें। इसका उत्तर सुनकर मैंने फिर न पूछा—साँळसे अधिक भैंसोंका क्या होता है? भैंसोको पानीमें बैठनेसे बळा प्रेम है; इसके लिए स्थान-स्थानपर चौळे-चौळे कुण्ड बने हुए हैं, जिनमें पानी आता और निकलता रहता है। खाने-पीने, रहने, दवाई-दर्पन सबका प्रबन्ध गो-ग्राम-सा ही है। किन्तु भैंस-ग्राममें दस हजार आदमी बसते हैं, जिनके लिए काम भी विशेष है। बात यह है कि गायोकी भाँति भैंसोका दूध नही भेजा जाता। भैंसोका दूध वैद्यकी सम्मतिसे कही थोळा-बहुत भेजा जाता है। नही तो सब दूध मशीन-द्वारा मथन करके दूहनेके बाद ही, मक्खन निकाल लिया जाता है। यह मक्खन बर्फसे रक्षित गाळीके डब्बोमें बन्द करके स्थान-स्थान पर भेजा जाता है। आवश्यकताके अनुसार मक्खनसे घी बनाकर भी भेजा जाता है।

"किन्तु; क्या मक्खन निकालकर हजारो मन दूधका अवशिष्ट भाग रोज फेंक दिया जाता है?"

"नही, यहाँ बटनोका बळा भारी कारखाना है। दूधका सफेद घन भाग रासायनिक प्रक्रियासे पृथक् करके उनसे नाना रंग-बिरंगके बटन बनते है। बटन ही नही, कितने दरवाजो, मशीनो आदिके सफेद हैंडलोंके लिए भी इसका उपयोग होता है, जिसमें आदमीका हाथ छूनेसे काला न हो। एक ओर बिजलीने धूएँको ससारसे विदा कर दिया, तो दूसरी ओर इधर इसने हाथका काला होना भी बन्द कर दिया है। आज क्या फैक्टरीके आदमीका रंग काला होता है? आर्ट पेपरपर चिकनाई लानेके लिए भी इस दूधकी सफेदीका प्रयोग होता है। अब हाथी-दाँत तो पैदा नहीं होता

किन्तु यह निस्सार दूध उसके कामके साथ और बहुत-से काम भी कर डालता है।"

घासोंके टाल तो मैंने जगह-जगह देखे थे, किन्तु पयाल, भूसाका गंज कहीं न मिला। पूछनेपर मालूम हुआ कि धान और गेहूँ आदिके डंटे भी यद्यपि कल-द्वारा काटे जाते हैं, किन्तु साथ ही बाली थोळे डंटेके साथ काटकर एक ओर रखी जाती है; और डठलका बोझा अलग बँधता जाता है। यह डठल और पयाल पीछे गाँठें बाँध-बाँधकर कागजके कारखानोंमें भेज दिये जाते हैं, जहाँ उनसे कागज बनाया जाता है। गाय-भैंसोंके खानेके लिए हरी और सूखी घास ही काफी होती है।

अब साढ़े तीनके तोपकी आवाज पासके किसी गाँवसे आई। हमारी गाळीवाले सभी लोग बेंचोंपर आकर बैठ गये। थोळी देरमें हवामें छतके तारके सहारे तैरता हुआ हमारे जलपानका तख्ता सामने आ गया। इस वक्त भोजन कुछ और ही नियामत थी। एक छोटी तश्तरीमें काली मिर्च लगाकर घीमें तले, नमकीन, हरी मटर तथा हरे चनेके दाने थे। एक-एक गिलास गन्नेका कच्चा रस दूधमें मिला हुआ अलग रक्खा हुआ था। इसके अतिरिक्त कुछ फल भी थे। मालूम हुआ, आज-कलके लोग पुराने गाँवोंकी इन नियामतोंसे भी महरूम नहीं हैं। बताया गया कि ऐसे ही सभी मौसिमकी चीजें बच्चे-बूढ़ों, पुरुष-स्त्रियोंके पास पहुँचा करती हैं। मक्काके दिनोंमें भुट्टे इसी तरह जलपानके समय पहुँच जाते यदि हम उस समय सफर करते। प्रसन्नता-पूर्वक हमारे गाळीके परिवारने जलपान किया। मेरे मनमें उस समय यह ख्याल आता था कि इसी युगके

बारेमें बीसवी शताब्दीके हिन्दू कहा करते थे कि आगे घोर कलियुग आयेगा। पृथ्वी नरक हो जायगी। यह तो सभी दृश्य स्वर्गके मालूम होते हैं। शायद उस युगके स्वार्थियोंके लिए समस्त भूमंडल-वासियोंका इस प्रकार आनन्द भोगना नरक प्रतीत होता था।

हाथ-वाथ धोकर, सामने खिळकीसे देखा, निचले खेतोमें कोसों तक चनोंकी हरियाली लहरा रही है। चनोंके सिवाय दूसरी कोई चीज ही नजर नही आती। पूछनेसे ज्ञात हुआ, अगला स्टेशन शालिग्राम है। वहाँ सिर्फ धान और चनोकी खेती होती है। धानोकी फसल कट जानेपर उन्ही खेतोमें चने बो दिये जाते हैं। पचास-पचास बीघोकी एक-एक क्यारी थी, जिसके चारो ओर ऊँची मेंळें थी। बासमती, किसुनभोग, कनकजीरा आदि उत्कृष्टतम धानोको छोळकर मोटे धानोकी तो अब खेती ही एक तरहसे बन्द है। विद्यालयोमे उनको मूल-रक्षा तथा परिचयके लिए थोळा बोया जाता है। बाकी खानेके लिए तो सब अच्छे-ही-अच्छे चावल है। यह शालिग्राम भी १० हजार आदमियोका ग्राम है। यहाँ खेतीके अतिरिक्त चावल अलग करनेका भी कारखाना है। धान-कुटाईका काम भी बस मशीन हीसे। चावल तैयार होते जाते है, और स्थान-स्थानपर गाळियोमें भर-भरकर रवाना होते रहते है। चनोको दाल और बेसन बनाकर तथा साबित भी चालान किया जाता है। पयाल तो कागजके कारखानोहीमें चला जाता है। हाँ, धानकी भूसी तथा और कूळे-करकटको खड्ढोमें सळाकर, खाद बनाई जाती है। बाकी खाद गो-ग्राम, भैंस-ग्रामसे आती है। कितने ही पशुओंके ग्रामोंमें हड्डी पीसनेके कारखाने हैं। मुर्दे पशुओका, पहले बता

दिया गया है, कोई चमळा नही उतारता। उन्हे गाळ दिया जाता है। पीछे सळी मिट्टी तो खादके स्थानपर भेज दी जाती है, और हड्डियाँ कलोंमें पीसकर चूर्ण कर दी जाती हैं। यहाँ उनसे बहुत-सी फास्फोरस भी निकाली जाती है, जिन्हे दियासलाई बनाने आदिके काममें लाया जाता है। यद्यपि सिग्रेटके बन्द होने तथा आगके स्थानपर बिजलीके उपयोग होनेसे दिया-सलाइयोका खर्च बहुत कम क्या, नहीके बराबर है; तब भी एकाध कार-खाने दियासलाईके रखे गये हैं।

शालिग्रामका खेलका मैदान स्टेशनके पास ही सळकके किनारे था। देखा, सहस्रों स्त्री-पुरुष वहाँ जमा हुए है। 'फुटबाल' खेला जा रहा है। बळे-बळे जवान खेलमें लगे हुए है। ओह, अभी एक गोल हुआ—सारी दर्शक-मंडलीने प्रसन्नता प्रकट की। आगे इधर कबड्डी जमी हुई है। हरी घासपर नगे पैर, जँघिया और बनियाइन पहिने खिलाळी खेल रहे है। स्थान सळकसे लगा हुआ है, और गाळी भी स्टेशनके पास आनेसे बहुत धीमी पळ गई है; इसलिए इनके पुष्ट, सुन्दर और स्वस्थ शरीर खूब दिखलाई पळ रहे हैं।

रेलोंकी सळकोके नीचेसे जगह-जगह नहरें जाती दीख पळती हैं। विश्वामित्रने कहा—अब गण्डक, गंगा आदि नदियोंकी धारा उतनी मोटी नही मिलेगी, जितनी कि पहले थी। सारे देशमें नहरोंका जाल बिछा हुआ है। इन नदियोंके पानीका बहुत-सा भाग तो ऊपरसे ऊपर ही नहरोंमें ले लिया जाता है। सभी ग्रामोंमें यद्यपि अपने कारखानोंकी भाफके लिए पानीकी आवश्यकता नहीं है, किन्तु सब कुछ हरा-भरा और साफ रखनेके

लिए उसकी बळी आवश्यकता है। खेती और बगीचेवाले गाँवोंको तो सींचनेकी भी हर वक्त आवश्यकता पळती रहती है। पानी और बिजली यही दोनों आजकलके संसारके प्राण हैं; बल्कि बिजली भी तो पानीहीसे तैयार की जाती है। इसलिए पानी आजकल सब कुछ है। इसका जैसा ही बळा भारी खर्च है, वैसा ही व्यर्थ व्यय भी न होने देनेकी ओर ध्यान है।

जंगल छोळते ही भूमि बराबर आ गई थी। अब पहाळ भी दूर धुँधले बादलोंकी भाँति दीख पळते थे। चारो ओर मैदान-ही-मैदान था। बस्तीके पास ही वृक्ष थे, अन्यथा वृक्षोका कही नाम न था। खेतोमें खाद ले जाने तथा अनाज ढो लानेके लिए छोटी-छोटी गाळियोकी पतली-पतली लोहेकी कळियाँ दिखलाई पळती थी। चनोमे यद्यपि फल लग गये थे, किन्तु अभी पके न थे—वह बिल्कुल हरे-हरे दिखलाई पळते थे, तोभी कही रखवालोकी झोपळियाँ न दिखाई देती थी। शालिग्राम स्टेशनसे कोसो आगे तक चनोके खेत चले आये थे।

अब भूमि ऊँची आई। चनोंकी जगह पर बळी-बळी बालियोंवाले गेहूँके खेत है। सळकके दोनों तरफ जहाँ तक दृष्टि जाती है, हरे-हरे गेहूँ ही दिखलाई पळते हैं। हवाके झोंकोसे हिलते हुए ये प्रशान्त सागरमें हल्की तरंगोंके समान मालूम देते हैं। गेहुँओंके स्वाद और आटेकी सफेदीके बारेमें क्या कहना है? किन्तु मुझे गेहूँके दाने अभी देखनेको न मिले थे। मैंने विश्वामित्रसे पूछा कि क्या हमारे समयके पूसा नं० ३ से भी यह दाने अच्छे होते हैं। उन्होने कहा—पूसा नं० ३ विद्यालयके संग्रहालयमें रक्खा हुआ है; वह भला इन गेहुओंका क्या मुकाबिला कर सकता है? खेतकी

जुताई, कटाई, दँवाई आदि सभीके बारेमें तो इकट्ठा ही सुन चुका था कि बिजलीकी कलों-द्वारा होती है। एक-एक हलमें बीस-बीस फाल पाँतीसे लगे रहते हैं, जो एक-एक हाथ गहरी भूमि खोदते चलते हैं। पीछेसे लगा पटेला (सिरावन) ढेलोंको फोळता और भूमिको बराबर करता आता है। बोनेका काम भी मशीनों ही द्वारा होता है। पकी खेतीका काटना, बाँधना, ढोना, आदि सभी काम कले ही करती हैं। अच्छी खाद और पर्याप्त जलकी अनुकूलतासे फसल जैसी चाहिये वैसी ही होती है। गेहुओंके खेतोंमें सालमें दो फसलें होती हैं, बरसातमें मक्का और बाजरा बोया जाता है, फिर वह गेहूँ। मक्का और बाजरेको आजकल आदमी केवल भुट्टा और होलहाके तौरपर ही मौसिममें दो-चार दिन खाते हैं; बाकी इन्हें गाय-भैंसोंको दिया जाता है। इनके डंठल भी कागजके कारखानोंमें जाते हैं। हरा होनेपर कुछ पासके किसी पशु-ग्राममें भी स्वाद बदलनेके लिए भेज दिये जाते हैं।

इस गेहूँ-ग्राममें आटा पीसनेका बळा कारखाना है। यद्यपि सभी गेहूँके ग्रामोंमें खेतीके साथ-साथ पिसाई भी होनेका नियम नहीं है। किन्तु नजदीकमें और कोई ऐसा कारखाना न होनेसे इसकी आबादी दस हजार करके यहाँ कारखाना भी रखा गया है। आटा-मैदा सब यहाँसे तैयार होकर चालान होता है।

गेहूँ-ग्रामकी सीमा पार होनेपर आम-लीची आदिके वृक्ष दिखलाई देने लगे। पूछनेपर ज्ञात हुआ, अब हम मोतीहारीके पास आ गये। यह बगीचा एक विद्यालयका है। पहले बतलाया जा चुका है कि तीन वर्षके बाद लळके-लळकियाँ माता-पिता तथा जन्म-स्थानसे अलग करके विद्या-

लयमें भेज दिये जाते हैं। प्रत्येक ३०-४० ग्रामके बीचमें एक ऐसा विद्यालय रहता है, जिसमें दस-पन्द्रह हजार या कभी इससे भी अधिक बालक-बालिका पढ़ते हैं। इनमें प्रायः सब प्रकारकी साधारण शिक्षा देनेका प्रबन्ध होता है। सत्रह वर्ष तक बालक-बालिकायें इन्हीमें पढते है। असाधारण प्रतिभाशाली, तथा किसी विद्याकी ओर विशेष प्रवृत्ति रखनेवाले बालक बीचमें भी एक विद्यालयसे दूसरे विद्यालयको—जहाँ उस विद्याका समुचित प्रबन्ध होता है भेज दिये जाते है। अध्यापको या विशेषज्ञोंकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए यहाँसे किसी अन्य विद्यालयमें जाना पळता है, नही तो साधारणतया यहीसे शिक्षा समाप्त करके विद्यार्थी कार्यक्षेत्रमें उतरते है। सभी विद्यालयोंकी शिक्षा-दीक्षा और रक्षाका ढंग एक-सा ही है। विश्वामित्र जीने विशेष पूछनेपर कहा, यह सब बातें तो नालन्दामें आँखोके सामने ही आयेंगी।

अब मोतीहारी नगर आया। क्या अब पुराने दर्शक पहिचान सकते है? बिल्कुल उलट-पुलट गया है। आबादी तो अब बिल्कुल दस हजार आदमियोकीही है। किन्तु आजकी स्वच्छता, सुन्दरता और एक-रूपता पहले कहाँ थी? पहाळ पार करनेके बाद ही हम बिहार प्रान्तमें आ गये थे। मोतिहारी बिहार प्रान्तके 'विदेह' प्रदेशका एक जिला है। प्रान्तोके नामोमें इधर बहुत-कुछ परिवर्तन हुआ दीख पळता है। पुराना सारनका जिला इसी प्रान्तमें है। उसके पश्चिम काशी-कोसल प्रान्त लखनऊसे आगे तक चला गया है। उसके बाद कुरु-पाञ्चाल-मत्स्य शूरसेन प्रदेशोंका इसी नाम का एक प्रान्त है। दिल्ली इसी प्रान्तमें है, जोकि अब भी भारतकी राज-

धानी या राष्ट्रधानी है। इस प्रकार प्रान्तों तथा प्रदेशोंकेनाम पुराने रखे गये हैं। पिछली शताब्दियोंके इतिहास-सम्बन्धी स्थानोके नाम भी ज्यों-के-त्यो रहने दिये गये है। यहाँ मोतिहारी नगरमें जिलाकी पंचायतका कार्यालय रहता है। सभापति और कार्यकारिणी के सदस्य अपने निर्वाचन-अवधि भर यहाँ ही रहते है। जिलाकी उत्पत्ति तथा आवश्यकताओंके अनुसार चीजें बाहर भेजने तथा मँगाने आदिका काम इनके कर्त्तव्योंमें एक प्रधान कर्त्तव्य है। जिलाके हिसाब-किताब तथा अन्य प्रकारके कागज-पत्रोंके साथ पुराने कागज-पत्रोका भी यहाँ संरक्षणालय है। इसके और जिला आफिसके अतिरिक्त दूसरे सारे ही मकान बिना कोठेके है। गाँवो और शहरोके घर-द्वार, रहन-सहन, खाना-पीना किसी बातमें भी कुछ भेद नहीं। अब वह पुरानी सळी गलियाँ और गन्दे मकान कही नहीं दिखाई पळते। जिलाकी पंचायतकी बैठकका यहाँ एक वृहद् भवन है। नगरवालोंका संस्थागार इससे अलग है। नगरमें एक छापाखाना है। जिला भरके आवश्यक कागज-पत्र यही छपते हैं। यहाँ सबसे बळा कारखाना मशीनोके सुधारने तथा पुरजोंके बदलनेका है।

आगे बढ़नेपर सळकके दोनों ओर दूर तक बाग-ही-बाग दिखलाई देने लगे। मैंने जलपानमें अमरूद और बेरके टुकळे खाये थे। एक-एक बेर एक-एक छटाँकके थे, तिसमें तारीफ यह कि गुठलीका पता नहीं। अमरूदोंमें भी, सारा फल ढूँढ़नेपर कही एक बीज मिल पाता था। मिठास और सुगंधके लिए क्या कहना है? विश्वामित्रने बताया, यह फल भी वैसे ही होते हैं। अब घटिया वस्तु पैदा ही नहीं की जाती। यह सारा बाग

बेर-ग्रामका था। इस ग्राममें यही काम होता है। फल बारहों मास होते रहते हैं, अत. लोगोको काम भी सदा मिलता रहता है। मालूम हुआ कि दूसरी तरफ इस ग्राममें जामुनका भी बाग है। इसमें भी बेरहीकी भाँति जादू किया गया है। अर्थात् आकार बहुत बळा; मिठास-सुवास अनूप; किन्तु गुठलीका पता नही।

बागोके बाद एक बार फिर खेत-ही-खेत दिखलाई देने लगे। कितने ही खेतोकी फसल तो कट गई थी, किन्तु ऐसे भी खेत थे, जिनमें कोसो फलियोंसे लदी सरसो थी। मालूम हुआ, यह तेलग्राम है। यहाँ इन खेतोंमें पहले तिल्ली उत्पन्न की जाती है, पीछे सरसो बो दी जाती है। यहाँ तेल निकालनेका बळा भारी कारखाना है। खाने तथा सिरमें लगानेका तेल प्रदान करना यहाँवालोका काम है। मैने कहा—तब तो चाहे बिजलीहीसे काम क्यो न किया जाता हो, किन्तु तेलसे कपळे तो अवश्य रँगे जाते होगे। विश्वा-मित्रने कहा—नही, पहले तो काम करनेके वक्तकी पोशाक ही सबकी दूसरी होती है; दूसरे, काम भी दूर-ही-दूरसे करना होता है। सभी काम तो मशीन और नल करते है। इन तेलोके ले जानेवाली बहुत-सी गाळियाँ भी मैंने स्टेशनपर देखीं, जो पुराने समयके मिट्टीके तेलकी गाळियोंसे बहुत मिलती जुलती थी। मेने पूछा—सुगंधित तेल तो यहाँ नहीं बनता होगा? इसपर बतलाया गया कि सुगंधित तेलोंके कारखाने गाजीपुर, जौनपुर, कन्नौज आदि नगरोंमें हैं। वहाँ आस-पास कोसों दूर तक इसके लिए फूलोंहीकी खेती होती है। तिल वहाँ दूसरे स्थानोंसे जाता है, जिससे वहाँके लोग तेल तैयार करते हैं। ऐसे ही मालूम हुआ, साबुन तैयार

करनेके ग्राम हैं, जहाँ साबुन-ही-साबुन तैयार किया जाता है।

अगले स्टेशनपर अँचार-ग्राम लिखा दिखाई पळा। मालूम हुआ, यहाँ अँचार और मुरब्बेके सिवाय कोई काम ही नहीं होता। अँचारके लिए फल, तेल; इसी प्रकार मुरब्बोके लिए अपेक्षित सामग्रियाँ उन-उन चीजोंके ग्रामोंसे आती है। यहाँवाले मशीनोसे फलोंको काट, सुखा-पकाकर, अँचार तैयार करके अपने बळे गोदाममें चीनी मिट्टीके बळे-बळे हौजोंमें रखते हैं। जब खाने लायक हो जाता है तो फिर जगह-जगह उसी प्रकार सावधानी-पूर्वक ले जानेवाली गाळियोंमें भेजा जाता है। यहाँके लोग अँचार बनानेकी विद्यामें बळे पटु हैं। उनको इस विषयकी विशेष शिक्षा मिलती है। कटहल, बळहल, आम, जामुन, आँवला, कदम्ब आदि सब चीजोंका अँचार बनता है। इन वस्तुओंके उत्पन्न करनेवाले अलग-अलग ग्राम हैं। और सभी वस्तुओंके आकार-प्रकार, गुणोमें विज्ञानने आश्चर्य-जनक परिवर्त्तन कर दिया है।

आगे हमें सळकके किनारे दर्जी-ग्रामके अतिरिक्त दाल-ग्राम पळा। दाल-ग्राममें वर्षाकी फसलमें खेतोमें उळद, मूँग और जाळेमें अरहर पैदा की जाती हैं। इनसे यहाँ दाल बनानेका बळा भारी कारखाना है। बाकी सब ढंग अन्य ग्रामों-सा ही है। इसके बाद कई-एक गाँव मिले, लेकिन सबमें कलमी आमो तथा लीचियोंका बाग ही था। यह बागोंका सिलसिला मुजफ्फरपुर होते गंगाके किनारे तक लगातार चला गया था। फलोंके रूप-गुणमें तो आश्चर्य-जनक परिवर्त्तन हुआ ही है, साथ ही फसल बारहो मास तैयार होती रहती है। कितने ही बागोंके वृक्ष सालमें दो बार फल

देते हैं। लीची और आमके फलोंमें गुठली अब बहुत छोटी-छोटी देखी जाती है; किन्तु, ऐसे भी फल तैयार किये जाते हैं जिनमें गुठली एकदम नहीं होती। सारा बिहार एक तरह आमों और लीचियोंका बाग है। अंग, मगध, विदेह इसके तीनों प्रदेशोंमें सबसे अधिक पैदावार इन्हीं दो फलोंकी है। यह फल यहाँसे भारतमें ही नहीं, यूरोप, अमेरिका तथा एशियाके सभी भागोंमें भेजे जाते हैं। बर्फकी गाळियोंमें वह इस प्रकार भेजे जाते हैं कि महीनों रखनेपर भी नहीं बिगळते। आमोंका आमरस भी तैयार किया जाता है, और उसके बनाने और रखनेकी ऐसी क्रिया और प्रबन्ध है कि खानेपर ताजे आमोंका स्वाद आता है।

दाल-ग्रामसे कुछ ही आगे आये थे कि अँधेरा हो गया। फिर मैं कुछ आगेके ग्रामोंकी बात पूछता और सुनता रहा। आठ बजेके भोजनको समाप्तकर थोळी देर और वार्तालाप किया। अब सारी ट्रेन बिजलीके प्रकाशसे जगमगा रही थी। इसके बाद मै सो गया। बारह बजेका समय था, जब हमारी गाळी गंगाका पुल पार करने लगी। हमने कहा अब विदेह छूटता है और मगधमें प्रवेश होता है। यह पटना देवानम्पिय पियदस्सी राजाकी पुरी आई। मैंने एक बार जो अपनी यात्राके अब तकके दृश्यको अपने सामने फिर रखा, तो विचार हुआ, अबके लोग बळे चतुर हैं। पहले का प्रत्येक आदमी चाहता था कि संसारकी सभी वस्तुयें वही पैदा कर ले। इस प्रकार एक ही गाँव अपनी आवश्यक सभी सामग्रियोंको पैदा करनेकी कोशिश करता था। अब तो एक गाँवके हजारों आदमी एक ही चीज पैदा करते हैं। दर्जीग्राम कपळा तैयार करनेवाले ग्रामोंसे कपळा लेकर स्त्री-

पुरुष-बच्चोंके लिए, तरह-तरहके नापके वस्त्र तैयार करता और आई हुई माँगोंके अनुसार वहाँ-वहाँ रवाना करता है। उसके कुछ आदमियोंको रसोई बनाना पळता है; किन्तु उसे न अनाज पैदा करनेसे सम्बन्ध; न आटे-चावलके भावसे प्रयोजन; न लाठीसे गाय-भैंस चरानेका काम; न आलू-बैंगन-गोभी बोनेसे मतलब; न ऊख पेल कर चीनी-गुळ तैयार करनेका प्रयास; अर्थात् उसके लिए अपेक्षित अन्य सभी वस्तुयें दूसरे ग्राम तैयार करते है, जिनके कि कपळोकी आवश्यकता वह पूरा करता है। इकट्ठा बहुत-सी चीजें कलो-द्वारा तैयार करनेमें श्रम और समय कम लगता है। कहाँ पहले लोगोके दिन-रात लगे रहने पर वही मसल थी कि यदि सिर ढँका तो पैर नंगा, यदि पैर ढँका तो सिर नगा। किन्तु यहाँ हफ्तेमें पाँच दिन और रोज चार ही घंटे प्रत्येक व्यक्तिको काम करना पळता है और इतनेहीमें स्वर्ग-सुख भोगनेकी सभी वस्तुएँ प्रस्तुत हो जाती हैं। पहलेकी सारी जिन्दगी जिन्दगीहीके लिए थी। आदमी रात दिन लगे रहकर तब अपने और अपने बाल-बच्चोंका पेट भर, तन ढाँक, जीवन-रक्षा करता था; दूसरे कामके लिए मुश्किलसे समय निकलता था। यहाँ मैं उन आदमियोंको नही गिनता हूँ, जिनका जीवन परायेकी मेहनत पर निर्भर था। उस समय मनुष्य कैसे अपने जीवनका कोई उच्च लक्ष्य रख सकता था जब कि इस प्रकारकी आपत्तियोंमें उसे पळा रहना पळता था? किन्तु अब तो अवस्था ही दूसरी हो गई है। ४ घंटे काम; बाकी २० घंटे सोना, पढ़ना, नृत्य-गान, सत्संग, विद्याव्यसन, परोपकार-चिन्तन, साहित्य-सेवा आदि सभी कामोंके लिए बचा हुआ है। इतनी सुखकी

आमप्रियोंसे घिरे रहने पर भी उसके लिए अपने जीवनका सर्वांश अर्पण नही करना पळता। प्रबन्ध कैसा है? वर्षमें नौ मास अपना कर्तव्य पालन करके आप तीन मास सैर-सपाटा भी कर सकते हैं, चाहे पृथ्वीके किसी भागमें भी स्वतन्त्रता-पूर्वक घरकी भाँति सानन्द रेल, जहाज या विमान-द्वारा विचर आ सकते है। अपने-अपने कार्यक्षेत्रके चुननेमें भी स्वतंत्रता है। केवल योग्यता होनी चाहिये। फिर भारतीय अंगूरकी खेतीका जानकार फ्रान्समें जाकर बस सकता, रह सकता है।

पटनामें नालन्दा जानेवाली गाळी तैयार मिली। हमारी गाळीकी यही तक पहुँच थी। अन्य साथियोंसे विदा हो मैं और विश्वामित्र नालन्दा की गाळी पर जा बैठे।

---

## ९

# अपूर्व स्वागत

अब हमारी गाळी दनदनाती नालन्दाके पास जा रही थी। प्रातः काल-का समय था। भगवान भुवन-ज्योति यद्यपि अभी पूर्वके क्षितिजपर दिखाई नहीं पळते थे, किन्तु उनके आनेका सम्वाद उषःकालीन रक्तिमा दे रही थी। दूर कृषि-विद्यालयके वृक्षोंके ऊपरसे यह लालिमा वैसे ही दीख पळती थी जैसे अँधेरी रात्रिमें दूरसे दिखलाती दावाग्नि। मानो भगवान भास्कर संसारके अन्धकारके दग्ध करनेमें अभी रुके हैं। यद्यपि अभी उनका साक्षात् आगमन नहीं हुआ किन्तु उनकी अवाईकी सूचना पाये हुए-से पक्षिगण इधर-उधर उळ-उळकर बैठ रहे हैं। रेल-लाइनकी दोनों ओर फलोंके भारसे लटके हुए चनोंके पौधे दूर तक दिखलाई पळते हैं, जिनमें कहीं-कहीं पतली-

पतली खेतोंमें जाने वाली लाइनें दिखलाई पळ जाती हैं। मैंने कहा, और तो सब है, किन्तु आजके लोगोंको चनेका होलहा तो न मुयस्सर होता होगा, किन्तु पीछे मेरा यह विचार भी गलत निकला। मैंने स्वय पीछे होलहा खाया था। मेरे साथी भी शौचादिसे निवृत हो बैठे थे। गाळीमें कहीं कुछ लोग पुस्तक पढ़ते हुए दीख पळते थे—कुछ लोग गान कर रहे थे बाकी लोग भी चुपचाप अपने स्थानों पर बैठे अपने-अपने विचारोंमें मग्न थे। उस भीतरी सन्नाटेमें वही गाळीकी चळचळाहट कानोंमें आ रही थी। मैं भी शौचादिसे निवृत्त हो, स्नान-कोठरीसे स्नान करके आ बैठा। अब हमारी गाळी विद्यालय-भूमिमें प्रविष्ट हुई। चारो ओर दूर तक खेतोंसे घिरा एक तीनतला सुन्दर मकान है। उससे थोळी दूर पर एक ऊँचा चार महलका मकान है; जिसमें चारो ओरके मकानोंके बीचमें एक बळा भारी चौखुटा आँगन है। मकानके बाहर फूलोंकी शोभा निराली है। विश्वामित्रने बतलाया, वह कृषि-विद्यालय है; और यह उसका छात्रावास। ऐसे ही और भी थोळी-थोळी दूरपर विद्यालय मिलते गये। आखिर ठीक साढ़े छः बजे गाळी नालन्दाके बळे स्टेशन पर पहुँची। नालन्दाका घेरा बहुत भारी है। यहाँ ४ स्टेशन हैं, जो समीपस्थ विद्यालयके नामसे पुकारे जाते हैं। इस बळे स्टेशनका नाम है नालन्दा प्रधान।

प्रत्येक ट्रेनमें अन्य प्रबन्धोंके साथ बे-तारका टेलीफोन भी लगा रहता है। पिछले स्टेशन पर फिर विश्वामित्रने हमारे आनेकी सूचना आचार्यको दे दी थी। हमारी गाळीके स्टेशन पर पहुँचते ही विद्यालयके बाजेवालोंने सूचनाका बिगुल दिया। पटनामें चढ़ते वक्त हमलोग दरवाजेके

पास ही बैठे थे। अतः गाळी खळी होते ही उतर पळे। प्लैटफार्म पर आचार्य तथा पचास प्रधान-प्रधान उपाध्याय खळे थे। मेरे उतरते ही सबने 'स्वागत' किया; और गलेमें फूलोंकी माला डाली। स्टेशनसे बाहर यद्यपि मोटर खळी थी, किन्तु मैंने कहा, इतनी दूरके लिए इसकी आवश्यकता नहीं; दूसरे, मार्गमें खळे बच्चोंसे मिलनेमें भी कठिनाई उपस्थित होगी। अब हमलोग 'वसुबन्धु'-भवनकी ओर चले। सळकके दोनो ओर पाँतीसे विद्यालय-के छात्र खळे थे। यह सब बळी श्रेणियोके छात्र थे। एक-एक विद्यालयके छात्रोंकी पक्ति एक ही जगह थी। पहुँचतेके साथ ही उस-उस विद्यालयके प्रधान आचार्यका परिचय कराया जाता था। इस प्रकार आखिर 'वसु-बन्धु'-भवनका बळा हाल आ गया।

'वसुबन्धु'-भवनकी शोभा अपूर्व है। चारो ओर दूर तक घासका हरा मैदान है। मकान बहुत ऊँचा, सफेद संगमर्मरका-सा दीखता है। इसके चारो ओर सगमर्मरकी छतरियोके नीचे पुराने और बीते हुए कितने ही आचार्यों एवं प्रसिद्ध महापुरुषोंकी मूर्तियाँ है। मुझे यह देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि यहाँ विद्याव्रतकी भी एक विशाल-मूर्ति स्थापित है। यह वही यशस्वी पुरुष है, जिन्होंने नालन्दाके पुनरुद्धार करते वक्त सर्व-प्रथम अपना सर्वस्व दिया था। सब स्थावर और जंगम सम्पत्ति उनकी पच्चीस लाखकी थी। इन्हें कोई सन्तान न थी। इन्होंने विद्यालयहीको अपना पुत्र बना, सर्वस्व अर्पण कर दिया। विद्याव्रतने सचमुच उस समय असाधारण साहस और स्वार्थ-त्यागका परिचय दिया था। मुझे स्मरण है कि जिस समय मेरे हृदयमें विद्यालयके पुनरुद्धारका विचार उठा, तो स्वयं

इस प्रकारका भी सन्देह उठता था, कि क्या मेरे ऐसा अकिंचन, अयोग्य व्यक्ति ऐसे भारी कार्यको उठा सकता है। मेरी हार्दिक इच्छा होती थी, कोई इसके सदृश ही महान् पुरुष इस कामको अपने हाथमें लेता तो मुझे भी उसके पीछे चलकर सब प्रकारसे सेवार्थ तैयार रहनेमें कितना आनन्द होता। किन्तु दुर्भाग्यसे महान् पुरुषोको इस महत्त्वपूर्ण कार्यका स्मरण न था, अथवा उपेक्षा थी। यही देख और सर्वथा अपनी अयोग्यता जानकर भी मैंने इस काममें हाथ डाल ही दिया। किन्तु इस काममें अनेक विद्वानोंके अतिरिक्त बहुत धनकी भी आवश्यकता थी। धनवालोंका अभाव न था, किन्तु उनमेंसे बहुत तो इसका महत्त्व ही नही समझते थे। जो समझ भी सकते थे, उन्हे ऐसा होनेपर विश्वास न था। अन्य जगहोमें धनादि प्रदान करनेसे पदवियो और खिताबोकी वृष्टिकी सम्भावना थी, वह यहाँ न थी; फिर ऐसी अवस्थामे कौन धनपात्र आगे बढता ?

मैंने बाल्यहीसे यद्यपि भिक्षु-आश्रम ग्रहण किया था, किन्तु भिक्षा माँगनेका अभ्यास न था। यह और भी एक कठिनाई थी। खैर, किसी-किसी तरह मैंने अपने आपको इसके लिए तैयार किया। उत्साही पुरुषोंने मेरी झोलीमें पळना आरम्भ किया। किन्तु फिर वही कठिनाई। यह सभी उत्साही पुरुष ऐसे थे जो अपने उत्साहके बराबर धन देने की सामर्थ्य न रखते थे। तो भी उनके उत्साहसे मुझे बळा उत्साह मिलता था। ऐसे समयमें विद्याव्रतके हृदयमें प्रेरणा हुई। यह मेरे लिए अपरिचित व्यक्ति थे। इसके पूर्व कभी इन्होंने ऐसे कार्योंमें हाथ भी न डाला था। परन्तु, न जाने हृदयमें एकदम क्या आया कि इन्होंने अपने सर्वस्वका दानपत्र मेरे पास भेज दिया।

आज दो शताब्दियोंके ऊपरकी बात मेरे लिए कलकी सी है। मेरे नेत्रोंके सामने अब भी मेरे वह सहयोगी फिर रहे है, जिन्होंने अपने जीवनको विद्यालयकी आधार-शिलाके नीचे डाला था। उस समयके हम लोगोंने उनका सम्मान किया—किन्तु उतना नहीं, जितनेके वे पात्र थे।

वसुबन्धु-भवन अर्द्धचन्द्राकार है। इसमें सवा लाख आदमियोंके बैठनेका स्थान है। बैठनेकी गैलरियाँ रंग-मचके सन्मुखसे आरम्भ हो धीरे-धीरे ऊँची होती चली जाती है। यद्यपि वह रग-मंचके सन्मुख अर्द्धचन्द्राकार दूर तक चली गई है, किन्तु इस प्रकार बनाई गई हैं, कि सभी दूर और नज-दीकके आदमी रंग-मंचको देख सकते हैं। इन गैलरियोंके नीचे-ऊपर तीन तहें हैं। बैठनेके लिए लम्बी-लम्बी कुर्सियाँ हैं। स्थान-स्थान पर बिजलीके लैम्प और पंखे लगे हुए हैं। रग-मचकी धीमी-सी आवाजको भी सबसे आखिर वाले श्रोता तकके कानमें बराबर पहुँचनेके लिए बीच-बीचमें शब्द-प्रसारक यंत्र लगे हुए है। यह शब्दोंको श्रोतव्य बनाते हैं। प्रत्येक तलमें वायु और सूर्य-प्रकाशके आने-जानेके लिए पर्याप्त रोशनदान और वातायन हैं। दीवारोंपर भूमंडलके प्राचीन और अर्वाचीन महापुरुषोंके चित्र और सुनहरे अक्षरोंमें सूक्तियाँ लगी हुई है। इन चित्रोंमें अधिकांश विद्यालय-के हीं छात्रों और अध्यापकोंके बनाये हुए हैं। छात्रों और छात्राओं, दोनों के बैठनेके लिए भवनमें स्थान हैं। बैठनेकी जगहोंपर पहुँचनेके लिए सीढ़ियाँ बाहरसे लगी हुई है। केवल रंग-मंचपर जानेका मार्ग सामने पळता है। रंग-मंचकी बगलमें नेपथ्य-शाला है, जहाँ नाटक करनेके समय पात्र नेपथ्य-परिवर्तन करते हैं।

विद्यालय-परिवार समूह-रूपसे मेरा स्वागत करनेके लिए भवनमें बैठा हुआ था। इसलिए आचार्य ने वहाँ चलनेके लिये मुझसे कहा। अब जलपानका समय समीप था, इसलिए रंग-मंचपर दो शब्दोंमें विद्यालयकी ओरसे अभिनन्दन करते हुए उन्होने मेरे गलेमें फूलोका हार डाला। मैंने भी दो ही शब्दोंमें इसके लिए कृतज्ञता प्रकट की; और कहा कि, अब तो मैं फिर अपने प्यारे विद्यालयके लिए आ ही गया हूँ।

वहाँसे मै सीधे विद्यालयके अतिथि-विश्राममें ले जाया गया। यह अतिथि-विश्राम बहुत दूर तक पाँच तलोंका मकान है। इसमें दस हजार आदमियोके आरामसे ठहरनेका स्थान है। कोठरी-आदि, सबका प्रबन्ध वैसा ही था, जैसा कि सेब-ग्राममें। किन्तु यह एक बहुत लम्बे-चौळे मैदान-वाले आँगनके चारों ओर बना हुआ है। ऊपर चढ़नेके लिए बिजलीके झूले हैं जिनपर बैठकर आदमी अपने विश्राम-स्थानके तलपर शीघ्र जा पहुँचता है। बिजलीके पखों और दीपको, तथा पानीके नलोंका पूरा प्रबन्ध है। अतिथियोकी सेवा और आव-भगतके लिए बहुत-से पुरुष और महिलायें नियुक्त हैं। अतिथियोंके लिए यही एक बळी पाकशाला और भोजन-शाला है। तैरकर स्नान करनेके लिए एक बळा कुण्ड भी है। उपयुक्त पुस्तकोंका एक पुस्तकालय और अस्वस्थ अतिथियोंके लिए पृथक् चिकित्सालय भी है। इस प्रकार यह अतिथियोका अच्छा खासा गाँव है। अतिथि-विश्रामके द्वार पर ट्राम है, जो राजगृह तक फैले हुए भिन्न-भिन्न कालेजों तक चली गई हैं। अतिथि जिस कालेजको जाना चाहते हैं, बस, दर्वाजे ही पर वहाँ जाने वाली ट्रामपर बैठ जाते हैं।

विद्यालयकी इस प्रकारकी श्री-वृद्धि देखकर मेरे आनन्दकी सीमा न थी। मेरे समयसे अब बहुत फर्क हो चुका था। विश्राम-स्थानपर पहुँच-कर वहाँ जलपानके लिए सब-कुछ तैयार पाया। मैंने विश्वामित्र, आचार्य वशिष्ठ तथा अन्य प्रधान अध्यापक, अध्यापिकाओंके साथ जलपान किया। जलपानके बाद आजका प्रोग्राम शिशु-कक्षा देखना निश्चित हुआ।

---

## १०

# शिक्षा-पद्धति : शिशु-कक्षा

दूसरे अध्यापक तो जलपानके बाद अपने-अपने स्थानपर चले गये थे, सिर्फ मैं, विश्वामित्र, आचार्य वशिष्ठ और शिशु-कक्षाकी प्रधानाध्यापिका एवं विद्यालयकी उपाचार्या वीरा साथ चलनेको रह गई थीं। बालको और बालिकाओंकी कक्षामें सूचना दी जा चुकी थी। निकलते वक्त निश्चय हुआ, कि पहले शिशु-कक्षामें चलना चाहिये। द्वारसे निकल कर हम लोग ट्रामपर जा बैठे। शिशु-कक्षा यहाँसे एक कोसपर थी। रास्तेमें जहाँ-तहाँ मैदान, बाग और अन्य-अन्य विषयोंके विद्यालय भी पळे। आज विद्यालयमें छुट्टीका दिन था। बालक-बालिकायें जहाँ-तहाँ घूमते तथा बैठे हुए दीख पळते थे। हमारी गाळीमें और भी कितने लोग चढ़े हुए थे। यह लोग प्रायः सब विद्यालयके अतिथि थे; जिनमेंसे कोई

अपने लळके या लळकी, या किसी सम्बन्धीसे मिलने आया था; कोई ऐसे ही अपनी वार्षिक छुट्टियोंमें मनोरंजनके लिए आया हुआ था। कोई किसी विद्या-सम्बन्धी जिज्ञासासे आया था।

आखिर ट्राम बालक-बालिकाओके उद्यानके मुख्य द्वारपर पहुँच गई। हम लोग नीचे उतरे। अध्यापिका-वर्गने द्वारपर स्वागत किया। द्वार तथा उसकी सीधमें तीन-तल्ला मकान स्वच्छता-सुन्दरतासे परिपूर्ण है। भीतर मकानोके अतिरिक्त, एक बळा भारी बाग वैसा ही लगा हुआ है, जैसा कि सेबग्रामके शिशु-उद्यानमें; फर्क यही है, कि बालकोंकी सख्या अधिक होनेसे यह एक स्वतंत्र ग्राम-सा मालूम होता है। सोनेके कमरोके अतिरिक्त पाक-शाला, भोजनागार, चिकित्सालय तथा भाण्डार-घर है। भीतर बच्चोको खुले पानीमें तैरने और नहानेके लिए बहते पानीका एक पक्का कुण्ड है, जिसमें डुबाव पानी नही रहता। जगह-जगह बागमें फव्वारे और लतागृह बने हुए है। खेलनेके लिए हरी घासोंसे ढँके बळे-बळे मैदान है। जाळेके दिनोंमें स्नानके लिए एक बळे मकानके भीतर गर्म पानीका कुण्ड है।

शिक्षा देनेवाली सभी महिलायें ही हैं। शिशु-कक्षामें प्रत्येक बालक-बालिकाको तीन वर्ष रहना पळता है। पहले बतलाया जा चुका है, कि राष्ट्रीय नियमके अनुसार सभी बालक-बालिकायें तीन वर्षकी अवस्थाके बाद माता-पितासे अलग करके विद्यालयोंमें भेज दिये जाते हैं। सम्पूर्ण शिक्षा तीन कक्षाओंमें विभक्त है। शिशु-कक्षा चौथे वर्षकी अवस्थाके आरम्भ होते ही आरम्भ होकर छठें वर्षकी समाप्तिके साथ समाप्त होती

है। बाल-कक्षा ७वें से शुरू होकर १४वें वर्षमें समाप्त होती है। इसके बाद तरुण-कक्षा १५ से २०वें वर्ष तक होती है। शिशु-कक्षामें शिक्षा प्रायः एक-सी होती है। पुस्तको द्वारा शिक्षाका अधिक व्यवहार नहीं है, यद्यपि छात्र इसी कक्षामें अक्षर और अंकको पहिचानने लगते है। शिशु-कक्षाके अन्तिम वर्षमें उन्हे लिखना-पढ़ना भी पळता है। किन्तु ज्यादातर शिक्षा मौखिक होती है । प्रत्येक शिक्षणीय विषयको मनोरंजक बनाकर इस प्रकार बच्चोके सन्मुख रक्खा जाता है, कि वे स्वयं उसको जाननेके लिए उत्कठित हो जाते है। जिस विषयमें जिस बच्चेकी उत्सुकता अधिक देखी जाती है, उसीकी ओर अध्यापिका-वर्ग भी उसका अधिक ध्यान दिलाता है। जितना बालकोकी ज्ञान-वृद्धिकी ओर ध्यान दिया जाता है, उतना ही उनकी शारीरिक उन्नतिका भी ख्याल रक्खा जाता है। यद्यपि छात्रोके कुस्तीके लिए कई-एक अखाळे छप्परोके नीचे बने हुए है, जहाँ नियत समय पर यह छोटे-छोटे पहलवान ताल ठोक-ठोक, अपने करतब दिखलाते हैं, किन्तु अधिकतर दौळ-धूपके खेलों-द्वारा इन्हे दृढ़ और परिश्रमी बनाया जाता है। कबड्डी, फुटबाल आदि कई प्रकारके खेल होते हैं । इन खेलोके नियम बतलाकर उन्हे स्वयं प्रबन्ध करनेको छोळ दिया जाता है। अध्यापिका-वर्ग केवल मार्ग दिखलाता है।

अपने कार्योंमें अधिक योग्यता प्रदर्शित करने पर बालक अपनी श्रेणीमें ऊपरके नम्बरमें गिने जाने लगते हैं। उनकी योग्यताका पुरस्कार यह तथा गुरुजनोंकी शाबाशी है। वस्तु आदिके रूपमें दूसरे प्रकारके पारितोषिक नहीं दिये जाते। बीस-बीस बच्चोंकी टोली होती है, जिसमें एकको वह अपना

नायक स्वयं चुनते हैं। एक-एक टोलीके लिये एक-एक सोनेका कमरा है।

रात्रिमें जब बालक-बालिकायें अपने-अपने बिस्तरों पर लेटते हैं, तो अध्यापिकायें इतिहासके प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पुरुषोंकी कथायें सुनाती हैं। इन कथाओंमें सन्-तारीख नहीं रहते। हाँ, यह बता दिया जाता है, कि अशोक बुद्धके बाद हुए थे—चंद्रगुप्त विक्रमादित्य उनके भी बाद। कथाओंकी भाषा सरल, तथा भाव वही लिये जाते हैं, जिन्हें बालक आसानीसे समझ सकें। यह कथायें इतिहास, भ्रमण और विज्ञान आदि सभीके सम्बन्धमें हुआ करती हैं। कभी-कभी छात्र इन्हे स्वयं भी दुहराया करते हैं। कभी अध्यापिका और विद्यार्थी-वर्ग कोई-कोई गीत भी मिलकर गाते हैं। बालकोंको स्वास्थ्य तथा स्वच्छता-सम्बन्धी नियम भी बळे ध्यान-पूर्वक बतलाये जाते है। उन्हें अपने ही नहीं, अपने आसपासको स्वच्छ रखने-रखवानेकी शिक्षा दी जाती है। उन्हें भली प्रकार बतला दिया जाता है, कि केवल तुम्हारी ही स्वच्छता पर्याप्त नहीं है, तुम्हारे अळोस-पळोसमें भी स्वच्छता होनी चाहिये। अपने यहाँ सफाई करके कभी अपने कूळा-कर्कटको दूसरेके यहाँ न फेंक दो। किसी जगह इस प्रकार कुछ पळा हुआ देखकर स्वयं उसे हटा दो, या उपयुक्त व्यक्तिको उसकी सूचना दे दो। उन्हें बळोका आदर और छोटोंसे प्रेम-भाव रखना सिखला दिया जाता है। बालक संसारके लिये जीवन उत्सर्ग करनेवाले पुरुषोंकी कथाओंको बळे प्रेमसे सुनते हैं। अध्यापिकायें उन्हें बळे मधुर और हृदय-ग्राहक शब्दोंमें कहती हैं। बालक कितनी ही बार सुनते-सुनते करुणाभिभूत हो आँसू बहाते देखे जाते हैं।

बळी-बळी मूर्तियों और चित्रोंके अतिरिक्त महापुरुषोंकी जीवन-घटनाओंके फिल्म बोलते वायस्कोपो द्वारा भी दिखलाये जाते हैं। बालक इन चलती-फिरती बोलती तस्वीरोंको बळे प्रेमसे देखते सुनते हैं। खेलमें बालक घर बनाते; फुलवाळी लगाते और पंचायत करते हैं। प्रसिद्ध नक्षत्रों और राशियोंका उन्हे परिचय कराके उनकी दूरी आदिके सम्बन्धमें मनोरजक कथायें सुनाई जाती हैं। पृथ्वी तथा सूर्य-सम्प्रदायके अन्य ग्रहों, उपग्रहोंका भ्रमण उन्हे खगोल-गृहमें दिखाया जाता है। इन कथाओसे मनुष्य-मात्रके प्रति भ्रातृत्व उनके हृदयस्थ करा दिया जाता है।

मृत पशु-पक्षियोके संग्रहालय-द्वारा भी यहाँ बहुत-सी प्राणिशास्त्र-की बातें बतलाई जाती है। कितने ही समय बालकोंको प्राणिशास्त्रीय विद्यालयके जन्तु-संग्रहालयमें ले जाया जाता है। वहाँ उन्हें जीवित प्राणी दिखलाये जाते हैं। यद्यपि इस प्रकार विद्याके अनेक विभागोमें बालकोंके प्रवेशका मार्ग खोला जाता है, किन्तु यह पूरी तरहसे ध्यानमें रक्खा जाता है, कि बालक उसमें मानसिक श्रम न अनुभव करे। इन्ही मनोरंजक रीतियों-से गणितका आरम्भिक ज्ञान भी उन्हें करा दिया जाता है। व्याकरणका नाम भी न लेकर भाषाके शुद्धाशुद्धका भी इन तीन वर्षोंमें पर्याप्त ज्ञान करा दिया जाता है। कथाओंकी मनोरंजकताके तारतम्यसे उन्हे भीतर-ही-भीतर भाषाकी सरसता और नीरसताके पहिचाननेका अभ्यास भी हो जाता है। शिशु-उद्यानके भीतर बालकोंकी अपनी गवर्नमेंट है। बालक इसके कार्य-निर्वाहके समय अनेक अद्‌भुत बुद्धि-चातुर्य प्रदर्शित करते

हैं। शिशु-कक्षाके छात्रोंकी पोशाक जाँघिया, मोजा, जूता, और कोट या कुर्ता है। जाळेके दिनोंमें सिर ढाँकनेका गुलबन्द भी पहिनते हैं। कहीं किसी प्रकारके आभूषणका वहाँ नाम नही होता, किन्तु वस्त्र, ऋतुके अनुकूल तथा सुन्दर होते हैं। इस पोशाकमें बालक-बालिकायें बळे फुर्तीले दीख पळते हैं।

हमारे जानेपर अपने-अपने नायकोंको सामने किये हुए सब टोलियाँ खळी थी, शिशु-पार्लियामेंटके प्रधान और मंत्रियोने शिशु-समाजकी ओरसे हमारा स्वागत किया। मेरे कहनेपर अखाळेका खेल देखना निश्चित हुआ। बालकोंने स्वयं अपनी-अपनी जोळी चुनी। ऐसी दस जोळियोंको मैंने निश्चय किया। इनमें प्रथम, द्वितीय और तृतीय सभी वर्षोंके बालक थे। अखाळेपर पहुँचकर पहली जोळी प्रथम वर्षके लळकोंकी छोळी गई। इनका नाम कृष्ण और इब्राहीम था। अखाळेमें पहुँचनेसे पहले ही इन्होने कपळा उतार कुश्तीका जाँघिया चढाया। पहले तो दोनो दूरसे दाव तकते रहे। आखिर गुत्थमगुत्थी हो गई। बालकोंको लळनेके कायदे भी बतलाये गये हैं कि सफल होनेपर भी किन-किन अंगों पर चोट करने या पकळनेसे हार हो जाती है। इब्राहीमने कृष्णको आखिर नीचे कर ही दिया, किन्तु कृष्ण भी एक था। इब्राहीम चित करते-करते हार गया, किन्तु वह चित न हुआ। जब वह इसमें लगा हुआ था, तभी अवसर देख कृष्ण ने ऐसी झपट मारी, कि इब्राहीम चारो खाने चित। दर्शक शिशु-समाज ने आनन्द-ध्वनि की। अब दोनों अलग-अलग खळे हो गये। इब्राहीमने एक बार और औसर देनेकी प्रार्थना की। कृष्णने कहा—भाई इब्राहीम!

कोई परवाह नही। एक बार तो चित कर ही दिया है। यदि अबकी तुमने पछाळ भी दिया; तो भी हम बराबर ही रहेंगे। अब दोनोंने फिर ताली बजा, भिळन्त शुरू की। अबकी इब्राहीमने सचमुच कृष्णको ले बरा। आखिर दोनोंकी जोळी बराबर गिनी गई। बाद और जोळियोंने भी एक-एक करके अपने-अपने करतब दिखलाये। इसके बाद दौळ और फुटबाल मैच भी हुआ। कुछ लळकोने तैराकी भी दिखलाई। अब हमलोग बागकी उस ओर गये, जिधर महापुरुषोकी मूर्तियाँ थी। मैंने प्रथम वर्षके बालक ज्ञानसे पूछा—तुम्हे मालूम है, इनमें मार्क्स कौन है। उसने झट जाकर हाथसे पकळ बता दिया—यह है। तब मैंने पूछा—तुम इनके बारेमें क्या जानते हो? उसने सक्षेपसे बालकोके समझने योग्य कितनी ही घटनाये बतलाई। साराश यह कि, इन्होने मानव-सेवाके लिए अनेक कष्ट सहे, किन्तु उसे न छोळा। एक बालिकासे फिर मैंने डार्विनके बारेमें पूछा। उसने भी हाथ रखकर, डार्विनकी कथा कह डाली। इसी प्रकार वनस्पति और पशुओंके बारेमें भी प्रश्न किया। उत्तर बहुत सन्तोषजनक मिले। सबसे बढ़कर बात यह देखी, कि बालकोमें किसी प्रकारका भय या संकोच न था। बालकोके सोनेके कमरे देखकर भोजनागार और चिकित्सालय आदिको भी देखा। आज मध्याह्न भोजन भी शिशु-मंडलीहीमें हुआ।

हमने बळे प्रेमसे उनके गीत और किस्से सुने।

इनकी शिक्षा हरी-हरी घासों, फल-फूलसे लदे वृक्षों और पशु-पक्षियोंके सग्रहालयोंमें होती है। बालिकाओंकी स्वच्छता, सुन्दरता और निर्भीकता देखकर मैं कहता था, क्या इन्हींकी भाँति बीसवीं शताब्दीकी भी स्त्री-

जाति थी। पुरुष-जातिने इनकी शक्तिको मूर्खतासे विकसित होनेसे रोक दिया था। उनको यह न मालूम था कि इससे उनकी अपनी भी हानि है। मैंने कहा—इन्हींमें आखिर उन अस्पृश्योंकी भी सन्तानें हैं, जिन्हें उस समयके लोग यदि मनुष्य कहते थे, तो मानों बळी कृपा करते थे। अन्यथा उन्हें पशुओंसे भी बदतर समझा जाता था। कुत्तेको गोदमें बिठानेमें संकोच न था, किन्तु मजाल क्या कि किस्मतके मारे वह पुरुष पासमें फटक सके। ओह! कितने करोळ ऐसे मनुष्योंके अमूल्य जीवन बरबाद कर दिये गये? अन्यायका कुछ ठिकाना था ? उन अभागोको गाँवमें कुआँ रहनेपर भी कुएँका पानी पीनेको नसीब न होता था। और दोषोंके साथ उनपर सबसे बळा दोष यह लगाया जाता था, कि वे मैला साफ करते हैं—वह मुर्दे पशुओको ले जाते है इत्यादि। किन्तु उन दोष-दर्शकोंको यह न सूझता था, कि समाजकी ऐसी सेवाके लिए—जिसे कि करनेके लिये और लोग तैयार न थे, तथा जिसपर समाजकी सुस्थिति निर्भर है—उनका कृतज्ञ होना चाहिये, न कि उलटा उन्हें तिरस्कारका पात्र बनाना चाहिये। खैर! वह भी एक स्वप्नका समय था, यद्यपि वह स्वप्न हजारों वर्षों लम्बा-चौळा था। आखिर मनुष्योने समझा—एक दूसरेको छोटा बनानेसे हमें स्वयं नीच बनना पळता है। संसार फिर उस स्वप्नको न देखे, उस नशे या मोह-निद्रामें न पळे।

इस प्रकार आज शिशु-कक्षाका निरीक्षण समाप्त हुआ। अध्यापिकायें सभी उत्तम योग्यताकी हैं। साथिन वीरा जिस प्रकार कन्याओंके लिए आदर्श हैं, वैसे ही बालकोंके लिए सच्ची निर्माता माता हैं। सब देखकर

प्राय: तीन बजे हमलोग अतिथि-विश्रामको लौट आये। कलके लिए बाल-कक्षाका देखना तै पाया। इसके बाद बहुत देर तक विद्यालयके दो शताब्दियोंके इतिहासके बारेमें वार्तालाप होता रहा।

---

## ११

# शिक्षा-पद्धति : बाल-कक्षा

आज सवेरे ट्रामपर सवार हो, हमलोग बाल-कक्षाकी ओर चले। यह और भी दूर, अर्थात् दो कोसपर थी। पहले कहे अनुसार बाल-कक्षा ८ वर्षकी अर्थात् ६ से १४ तककी है। इसमें दो-दो वर्षकी उपकक्षायें बनाई गई हैं, जिनके लिए पृथक्-पृथक् निवासोद्यान हैं। बाल-कक्षामें संक्षेपसे साहित्य, गणित, भूगोल, व्याकरण, धर्म, संगीत, आलेख्य, कृषि, गोरक्षा आदि विषय हैं। किन्तु यह सभी प्रत्येक छात्रको पढ़ना आवश्यक नहीं है। विद्याओंकी ओर प्रलोभन-द्वारा प्रवृत्ति कराकर देखनेपर जिधर बालकका स्वाभाविक रुझान नहीं देखा जाता, उधर बल नहीं दिया जाता। उदाहरणार्थ इस श्रेणीमें प्रविष्ट हो, तीसरेसे पाँचवें वर्ष तक प्रत्येक बालकको

संस्कृत आदि किसी भाषाके सिखानेकी प्रथा है। इन भाषाओंके सिखानेका वातावरण इस प्रकारका बनाया गया है, (यह पहले सूचित किया गया है) जहाँ बालकको छोटे शिशुओंकी भाँति भाषा सीखनेकी अनुकूलता रहती है। जबर्दस्ती मस्तिष्कपर लादनेका प्रयत्न नही किया जाता। किन्तु देखनेपर जब मालूम हो जाता है, कि बालककी उधर रुचि नहीं है, तो फिर बल नही दिया जाता। बाल-कक्षामें दाखिल होनेके साथ ही बालकोंको उनके नित्य-कृत्य बतला दिये जाते हैं।

बाल-कक्षामे पहुँचते ही वहाँ भी अध्यापक-अध्यापिका-वर्ग तथा विद्यार्थी-समाजकी ओरसे हमारा स्वागत हुआ। सब बालक-बालिका श्रेणीसे खळे थे। पोशाक सबकी जाँघिया और कुर्त्ता था। जाळेमें सिर ढाँकनेके लिए गर्म वस्त्र, एवं जूता-मोजा भी मिलता है। एक-एक उपकक्षाका एक-एक गाँव बसा हुआ है, जहाँ भोजनालय, संस्थागारके अतिरिक्त भाडार भी रहता है। यहाँ भी तैरकर नहानेका कुंड है तथा अखाळो और खेलोके मैदानोंका पूरा प्रबन्ध है। मकान तीन-महले हैं। ऊपर जानेके लिए बिजलीका झूला है। २०-२० विद्यार्थियोके सोनेके लिए एक-एक कमरा मिलता है। लिखने-पढ़ने, प्रकाश, पुस्तक रखने आदि सबका उसमें प्रबन्धहै। निद्रासे उठकर शौचादि जाना पाँच ही बजे होता है। स्नान आदिसे निवृत्त होकर बालक कलेवा करते हैं। भोजनके लिए जो चार समय नियत हैं, वही बाल-कक्षाके लिए भी हैं—शिशु-कक्षाकी भाँति छः बार नहीं। अध्यापनके लिए यहाँ पृथक् पाठशाला है। बैठनेके लिए बेंचें है।

यद्यपि बाल-कक्षासे नियमानुसार पढ़ाई शुरू होती है, तो भी विषयको

रुचिकर बनानेकी ओर खूब ध्यान रहता है। इस समय मनोहर भाषामें लिखी पुस्तकों, नाटकों और बायस्कोपों-द्वारा इतिहासकी शिक्षाको भी जारी रक्खा जाता है। नाटकोंको बालक स्वयं अभिनीत करते हैं। विज्ञान और ज्योतिष-सम्बन्धी जिज्ञासाओंकी पूर्तिके लिए उत्कंठा होनेपर दूरवीक्षण, अणुवीक्षण एवं प्रयोगशालाओंका भी सहारा लिया जाता है। कृषि, गो-रक्षा आदि विद्यायें क्रियात्मक ही अधिकतर सिखाई जाती है, जिसके लिए खेत तथा गोशाला आदिका प्रबन्ध है। बाल-कक्षाके प्रथम दो वर्षोंको समाप्तकर विद्यार्थियोंको सार्वभौमी भाषाकी शिक्षा दो वर्ष तक दी जाती है। इस समय और विषय पूर्ववत् ही मातृ-भाषामें चलते रहते हैं। सिर्फ बालकोंका निवास सार्वभौमी छात्रावासमें होता है, जहाँ सब लोग केवल वही भाषा बोलते हैं।

यह सार्वभौमी भाषा क्या है? यह एस्पेरेंटो भाषाका और भी परि-मार्जित रूप है। एस्पेरेंटोमें प्रयुक्त होनेवाले आर्टिकल्स (Articles) को उठा दिया गया। बिल्कुल पन्द्रह नियमोंमें इसका सारा व्याकरण समाप्त होता है। लिंग, विभक्ति, प्रत्ययमें अटल नियम हैं, जिनका अपवाद कहीं नहीं होता। जैसे वचन दो ही हैं—एक वचन, बहुवचन। लिंग तीनों हैं, किन्तु निर्जीव पदार्थोंमें सभीके लिए नपुंसक लिंगका प्रयोग होता है। स्त्रीलिंगवाले सभी शब्द आ, ई, ऊ, अन्तवाले होते हैं तथा केवल सजीव ही के लिए प्रयुक्त होते हैं। ऐसे ही अन्य स्वर-अन्तवाले शब्द सजीवके लिए आनेपर पुल्लिंग होते हैं। क्रिया-रूपोंके लिए सीधे-सीधे चार काल हैं, अर्थात् भूत, भविष्य, वर्त्तमान और आज्ञा। वचन यहाँ भी दो हैं। बाकी पुरुष

ज्यों-के-त्यों हे। धातुओंका चुनाव खास तौरसे हुआ है। पहले पाली, प्राकृत ज़ेन्द, और संस्कृत भाषाओंमें जो धातु एक-से हैं, उन्हे छाँट लिया गया है। अब इन धातुओंसे ग्रीक, लैटिन, एवं टयुटानिक (Teutonic), रोमन (Roman), स्लाव (Slav) और केल्टिक (Celtic) भाषाओंकी धातुओंसे तुलना करके जो धातु बहुत-सी भाषाओंमें सम्मिलित है, उन्हे चुन लिया गया है। सार्वभौमीमें इन्ही धातुओंसे बने शब्दो और क्रियाओंको लिया गया है। वैज्ञानिक शब्द जो अब तक यूरोपीय भाषाओमें प्रचलित थे, वही स्वीकार कर लिये गये हे, केवल उनके अन्तमें उनके लिंगके अनुसार प्रत्यय लगा दी गई है। अपने जीवनमें राष्ट्रीय आवश्यकता या भ्रमण आदिके लिए इस भाषाकी बळी आवश्यकता है। इसलिए बाल-कक्षामें नवें और दसवें वर्षमें इसकी शिक्षा अनिवार्य-सी है। सार्वभौमी छात्रावासमें जानेपर मुझे सभी बालक उसीमें वार्तालाप करते मिले। उस समय दसवें वर्षवालोने मेरे आनेके उपलक्षमें अपनी प्रसन्नता इसी भाषामें प्रकट की। जिसके बहुतसे शब्द मुझे समझमें आने लगे थे। लोगोने बतलाया, यह भाषा भूमडल-वासियोकी प्राय: सभी मातृ-भाषाओका पूर्ण बीज रखनेसे सभीके लिए आसान है। चीन, जापान, स्याम, तिब्बत, बर्मा आदि देशोमें भी इसका खूब प्रचार है। × × × × × × × × भारतमें सभी जगह भारती भाषा इस समय मातृ-भाषा है। पेशावरसे बगदाद तक बोली जानेवाली फारसी या उसकी बहिन भी इसके कुलकी है। यूरोपकी भाषाओंकी भी यही दशा है, जिनका प्रचार यूरोप ही नही, अफ्रिका, अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा भूमंडलके अन्य द्वीपोंमें है।

यह पहले कहा जा चुका है, कि आजकलकी शिक्षा-प्रणालीका मूल सूत्र है बालककी स्वाभाविक जिज्ञासा रखनेवाली बुद्धिको उसके अभीष्ट लाभमें मदद पहुँचाना। इसीलिए परीक्षा करके जिस ओर बालककी स्वाभाविक रुचि होती है, उधर ही उसकी शिक्षाका मार्ग खोला जाता है। दो शताब्दियोके अनुभवने बतला दिया है, कि यही वास्तविक शिक्षा है। जबर्दस्ती ठोंक-पीटकर वैद्य-राज बनानेवाले विचारने अनेक स्थानोंपर बाधा पहुँचाई थी। पुराने समयके लोग भी खूब थे—खासकर २०वीं शताब्दीके। जिस प्रकार माता-पिता पुत्रकी इच्छा और उद्देश्यको देखे बिना बालपनहीमें उसका जोळा उसके गले बाँधते थे, वैसे ही यह भी निश्चय कर डालते थे कि मेरा लळका वकील होगा, मेरा डाक्टर इत्यादि। फल इसका यह होता था कि कितनी ही बार बालकको अपनी विद्या, रोचक कौन कहे, क्वीनैनकी गोलीसे भी कळवी मालूम होती थी; और उसका कोई सुपरिणाम न होता था। किन्तु अब मामूली शिष्टाचार और लोक-व्यवहारका उपयोगी ज्ञान तो बालकोको देखते-देखते और सुनते-सुनते हो जाता है। और विद्याकी बात उनकी प्रवृत्तिपर आरम्भ होती है। इस प्रकार गणित और ज्योतिषकी ओर प्रवृत्ति रखनेवाले बालक उतना ज्ञान बाल-कक्षाहीमें सम्पादन कर लेते है, जितना बीसवी शताब्दीके उस विषयके एम० ए० भी नहीं जानते थे। अंकगणित, रेखागणित, बीजगणित, त्रिकोणमिति, अक्षमिति, चलनकलन आदि सभी गणितकी शाखाओंमें उनका पूरा अधिकार हो जाता है। वह अपने पाठ्य विषयमें नित्य नवीन उत्सुकता और उत्साहके साथ संलग्न रहते हैं। उनका पठित विषय बहुत कुछ

उपस्थित रहता है। साधारण ज्योतिषकी शिक्षा तो उनकी प्रथमहीसे आरम्भ रहती है। अपने अगले मार्गमें जहाँ-जहाँ जिस-जिस गणितकी आवश्यकता प्रतीत होती है, उधर बळे आनन्दसे वह प्रवृत्त होते हैं। साहित्य, भाषा, इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदिमे भी यही बात है, यद्यपि कोई बालक इन विद्याओंके साधारण ज्ञानसे भी सर्वथा अनभिज्ञ नही रहता। कारण, उसके नित्यके व्यवहारमें, बात-चीतमें, संसर्गमें उनकी आवश्यकता पळती है। भविष्य-जीवनमें भी उनका साधारण ज्ञान अनिवार्य मालूम होनेसे वे उधर भी थोळा-बहुत परिश्रम स्वय कर डालते है; किन्तु प्रकृतिके अनुकूल न होनेसे वह अधिक दूर तक उसमें नहीं जाते। बीसवी शताब्दीमें जैसे खास-खास ही पाठ्य पुस्तके रख दी जाती थी, वैसा अब नही है। कौन-सी पुस्तक अब पढनेको देनी चाहिये, यह उस अध्यापककी इच्छापर निर्भर है, जो अपने विद्यार्थीकी प्रकृतिका बराबर निरीक्षण कर रहा है। समान प्रकृतिवाले छात्रोकी टोलियाँ बनी रहती है, जिनके लिए प्रकृत विषयका मर्मज्ञ अध्यापक रहता है। विद्याके लिए अपेक्षित सभी सामान मौजूद रहते हैं। इस प्रकार शिक्षामें आजकी चाल आकाश-विमानोहीकी भाँति तेज है।

बाल-कक्षाकी सभी बस्तियोको हमने घूम-घूमकर देखा। सिर्फ इसी एक कक्षाके पाँच बळे-बळे ग्राम है। हर एक ग्राममें निवासियोंकी आवश्यकताके सभी सामान मौजूद रहते है। अन्यत्र जैसे मैंने सब जगह यह नियम-सा देखा था कि मकान कोठेवाले नहीं होते, यहाँ विद्यालयमें सभी मकान तीन-महला, चार-महलासे ऊपरहीके हैं। शिशु-कक्षाकी बस्तियोंकी भाँति

ही बाल-कक्षामें भी एक-एक सोनेके कमरोंमें बहुत-से विद्यार्थी सोते हैं।

विद्यार्थियोंको पुस्तकें तथा अन्य सामान रखनेके लिए अलग-अलग आलमारियाँ हैं। पढ़नेके लिए पृथक् भी पाठशालाका विशाल भवन है। खेलने-कूदने, लळने, तैरने आदिके बळे-बळे मैदान तथा तालाब है। बालकोंका शरीर देखनेहीसे पता लगता है कि उनकी शारीरिक उन्नतिपर कितना ध्यान दिया जाता है। सब बातोंका पूरा निरीक्षण करके दोपहरका भोजन भी हमने यहीं ग्रहण किया।

चौदह वर्षहीकी अवस्थामें बालिकाओंको इतना ज्ञान हो जाता है, जो कि २०वी शताब्दीमें पर्याप्तसे भी कही अधिक कहा जाता। बालकोंकी अपेक्षा बालिकायें सगीत, आलेख्य, चिकित्सा और साहित्यमें अधिक रुचि रखतीं तथा योग्य भी निकलती है। बालिकाओंकी अवस्था देखकर बीसवीं शताब्दीके वे आदमी भी अपने विचार बदल डालते, जिन्हें कई निर्बलतायें स्त्री-जातिमें स्वाभाविक मालूम होती थी। मुझे यहाँके शिक्षण और योग्यताको देखकर निश्चय हो गया कि आजकलके मानव-जगत्की बहुत-सी न्यामतें इसीकी बदौलत है। एक ओर तो हजारो झगळो और आपत्तियों की जळ पारस्परिक असमानता उठा दी गई और दूसरी ओर ऐसी सर्व-गुण-भूषित शिक्षा; फिर क्यों न मनुष्यलोक पुराने ख्याली देवलोकसे भी अच्छा हो जाये ?

---

१२

# शिक्षा-पद्धति : तरुण-कक्षा

पूर्व क्रमहीसे मैं नित्य विद्यालयके एक-दो विभागोंका निरीक्षण करता रहा। और १२ दिन ऐसा करते रहनेपर एक बार सरसरी तौरसे सबको देख सका। शिशु-कक्षा और बाल-कक्षाकी शिक्षा जिस प्रकार अनेक विषयोंमें होती है (यद्यपि उसमें विद्यार्थीकी स्वाभाविक प्रवृत्तिका पूरा ध्यान रखा जाता है) वैसा मिश्रशिक्षण तरुण-कक्षामें नहीं है। संसारके व्यवहारोंको अच्छी तरह चलाने, तथा मनुष्यकी वैसी जिज्ञासा भी होनेसे, प्रथम दो कक्षाओंमें कुछ सर्वतोमुखी-सी शिक्षा दी जाती है, किन्तु तरुण-कक्षामें शिक्षा पानेवालोंके लिए अनेक विद्यालय हैं, जो विद्याकी एक शाखाकी शिक्षा देते हैं। विद्यार्थी अब केवल उसी विद्याका अध्ययन करता है, जिसकी ओर उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति है और जिसे उसने

पिछले वर्षोंमे भी मुख्य तौरसे, औरोंको गौण रखते हुए, पढ़ा है। यद्यपि ऐसे बालकोंकी संख्या बहुत कम होती है, किन्तु हैं ऐसे भी विद्यार्थी, जो व्यवहारोपयोगी ज्ञानसे इसलिए अनभिज्ञ रह जाते है, कि उनकी रुचि न होनेसे उधर उनको परिश्रम नही कराया जाता।

नालन्दा विद्यालयमें पृथक्-पृथक् विषयोंके पन्द्रह विद्यालय हैं, जो भाषा-पुरातत्व, ज्योतिष, दर्शन, विज्ञान, साहित्य, संगीत, आलेख्य, वास्तु (सिविल इंजीनियरिंग), आयुर्वेद, वनस्पति, प्राणि, कृषि, यान्त्रिक एवं शिक्षण विद्यालयोंके नामसे प्रसिद्ध हैं। अध्यापक अपने-अपने विषयके पूर्ण ज्ञाता है। भाषा-पुरातत्त्व विद्यालयमें इतिहासकी मौलिक सामग्रीसे परिचय एवं उसके एकत्रित करनेका ढंग बतलाया जाता है। यह बीसवी शताब्दी नही, बाइसवी शताब्दी है। भूमि, बालू अथवा समुद्रोंके नीचे पळी हुई बहुत-सी सामग्रियाँ बहुतायतसे इधर मिली है। अनेक पुरानी जातियोंके धर्म, आचार-विचार तथा इतिहासपर इधर बहुत प्रकाश पळा है। भारत, मिश्र, असुर, कल्दान, ईरान, मेक्सिको, ब्राजील आदि अनेक देशोंकी प्राचीन सभ्यताकी परिचायक अनेक सामग्रियाँ हाथ लगी है। राष्ट्रने इन सामग्रियोंके प्राप्त करने और रक्षित रखनेमें कोई कसर नही उठा रखी है। जहाँ प्राचीन खंडहरोंको खोदने, चीजोंकी रक्षाके लिए सुरक्षित स्थान बनानेमें लाखों आदमी काम कर रहे हैं, वहाँ हजारों विद्वान दिन-रात उनके रहस्यके खोलनेके लिए भी परिश्रम कर रहे हैं। भारत की प्राचीन सभ्यता और इतिहासके लिए मध्य एशिया, तिब्बत, हिमालय, जावा, बाली, स्याम, सुमात्रा और लंका (सीलोन) तक छान मारा गया है। इस काममें नालन्दा-

विद्यालयका हाथ सबसे अधिक क्या, बिल्कुलके करीब है। पुरातत्त्व-विद्यालयके साथ यहाँ इतिहासकी इन सामग्रियोंका एक बळा भारी संग्रहालय है, जो संसारमें प्रथम गिना जाता है। इसमें प्राचीन भारत ही नहीं, असुर, मिश्र, मेक्सिको आदि देशोंके इतिहासकी सामग्री भी है। ससारके दूसरे संग्रहालयोंमें जो वस्तुयें इस प्रकारकी है, उनकी भी यहाँ प्रतिकृति रखी गई है। इसमें स्वय नालन्दा-विद्यालयकी भी पुरानी बहुत-सी वस्तुयें एकत्रित की गई है। यहाँकी ऐतिहासिक सामग्रियाँ, जो पहले दूसरे संग्रहालयमें चली गई थी, वह भी अब यहाँ लौट आई हैं। संग्रहालय-भवन आठतलोंका, बळी दूर तक फैला हुआ है। भाषाओंकी शिक्षाका नवीन ढंग ऐसा सरल निकला है कि जिससे और भी बहुत-सी कठिनाइयाँ दूर हो गई है। पुरातत्त्व और इतिहासके मौलिक जिज्ञासु विद्यार्थियोंको पहले उनके अभीष्ट विभागमें अपेक्षित भाषाओका ज्ञान कराया जाता है।

ज्योतिष-विद्यालय राजगृहमें है। इसके साथ एक बहुत भारी वेधशाला है, जो वहाँके 'वैभार गिरि'पर बनी है। वैभार गिरिकी काया-पलटहो गई है। ऊपर जानेके लिए बहुत अच्छी सळक है, जिसके अगल-बगल वृक्ष लगे है। वेधशालामें अनेक दूरवीक्षण यंत्र हैं, जिनमें एक तो संसारके तीन सब-से बळे दूरवीक्षणोमेंसे है। जिसमें ग्रहोकी साधारणतया देखी जानेवाली आकृति लाखों गुनी बळी दिखाई देती है। इसी प्रकार वर्णवीक्षण (Spectroscope) यंत्र भी बहुत भारी ताकतका है। तार-रहित तारका यहाँ ही एक बळा अड्डा है। अब मंगलके विषयमें बहुत अधिक ज्ञान हो गया है। वहाँसे ऐसे ही वार्तालाप होने लगा है, जैसा कि

भूमंडलमें एक जगहसे दूसरी जगहपर। पहले एक दूसरेकी भाषा समझनेमें कठिनाई हुई थी, किन्तु अब वह भी जाती रही। यद्यपि दिन-प्रति-दिन वृष्टि और जलकी कमी होती जाने एवं मंगल-गर्भीय उष्णता—जीवनी-शक्ति—का ह्रास होते जानेसे वहाँके लोग चिन्तित हैं, तो भी उन्होंने इसके लिए बहुत-सा उपाय किया है। जहाँ एक ओर नहरोंका जाल-सा बिछा दिया है, वहाँ अपने यहाँकी जन-वृद्धिको भी रोक दिया है—रोक ही नहीं, बल्कि कम करना आरम्भ किया है। यद्यपि लोग भी इसके प्रयत्नमें है, कि किसी नये ग्रहमें जायँ, किन्तु अभी तक इसका कोई उपाय नहीं सूझा है। भूमंडलके लोग भी, उनकी कठिनाइयोंको देखकर चुप नहीं हैं। वह भी इसका हल ढूँढ़ रहे हैं। कोई-कोई इस बातकी भविष्यद्वाणी भी करने लगे है, कि वह समय समीप है, जबकि मनुष्य एक ग्रहसे दूसरे ग्रहमें जा सकेंगे। यदि ऐसा हो सका, तो हमारा अपने रहन-सहनका संसार तथा भाई-बन्धुपन और भी बढ़ जायगा। एक-एक ग्रहके ठंडा होनेपर लोग पहलेहीसे दूसरे ग्रहमें चले जा सकेंगे। इस प्रकार कमसे कम बृहस्पतिकी आयु-भर तो निश्चित रहेंगे। वैभारगिरिपर वेधशालाके कामहीके लिए दूर तक मकान बन गये हैं। पानी और बिजलीका ऊपर ही खूब अच्छा प्रबन्ध हो जानेसे वह और भी अधिक आनन्दका स्थान हो गया है।

दर्शन-विद्यालय यहाँसे दो कोस पीछेकी ओर है। यहाँ भारतीय सेश्वर-निरीश्वर दर्शन ही नहीं, भूमंडल भरके दार्शनिक विचारोंका अध्ययनाध्यापन होता है। आचार्य वशिष्ठ इस विषयके स्वयं अपूर्व विद्वान् हैं। उनका बहुत समय इसीके पठन-पाठनमें व्यतीत होता है। सभी विद्यालय एक

दूसरेसे दूर-दूरपर हैं। उनके बीचमें या तो मैदान हैं, या आम-लीची आदि फलोंके कोसों लम्बे बाग। सभी विद्यालय पुस्तकालयों तथा अपेक्षित अन्य सामग्रियोंसे युक्त हैं। जहाँ विज्ञान-विद्यालय रसायनशाला तथा प्रयोगशालासे सुसज्जित है; वहाँ वनस्पति और प्राणिशास्त्रके विद्यालयोंके साथ बळे-बळे वनस्पति-उद्यान एवं प्राणि-संग्रहालय हैं। इस प्रकार सभी विद्यालय सांगोपांग विद्या-वितरण कर रहे हैं। उन-उन विद्यालयोंके छात्रावास उनके पासहीमें हैं। छात्रावास क्या हैं, एक-एक ग्राम हैं। बालकों और बालिकाओंके छात्रावास तथा विद्यालय इकट्ठे ही हैं। स्त्री-पुरुषका भेद ही उठा-सा दिया गया है।

विद्यालयकी बस्तियोंमें भोजन बनानेवाले तथा स्वच्छता एवं मशीनो आदिके सुधारनेके लिए कुछ और लोग नियुक्त है, जिनके निवास-स्थान अलग बस्तियोंमें हैं। लळकोंके वस्त्र धोने एवं कपळा सीनेके गाँव भी पृथक् हैं। इसी तरह गोपाल-ग्राम भी पास, किन्तु विद्यालयकी सीमाके बाहर है। पुस्तकोंके छापनेके लिए जो 'नालन्दा प्रेस' पहले खोला गया था, अब उसका काम बहुत बढ़ गया है। भिन्न-भिन्न शास्त्रोंके यहाँसे मासिक कई एक पत्र निकलते हैं। नालन्दाके पुराने स्तूपों और इमारतोंको पूरा सुरक्षित रक्खा गया है। भैरवजीके नामसे २०वीं शताब्दीके ग्राम्यजनोंमें प्रसिद्ध बुद्धकी मूर्तिपर अब एक बहुत अच्छी छतरी लग गई है। वह विशालकाय, सुन्दर शांत मूर्ति अब और भी अधिक मनोहर मालूम होती है। उसके पासका बळा स्तूप अब नया-सा मालूम होता है। सूर्यनारायण और उसके पासका वह गाँव अब नहीं है।

विद्यालयकी तरुण-कक्षा, एवं विद्यालयकी शिक्षा समाप्त कर और अधिक पढ़नेवाले विशेषज्ञोंकी श्रेणीमें भारतसे बाहर लंका, बर्मा, स्याम, जावा, चीन, जापान, तिब्बत आदि देशोंके विद्यार्थी बहुत अधिक संख्यामें है। इन देशोंके आचार्योंमें आजकल नालन्दाके शिक्षितोंकी काफी संख्या है। संसारमें कोई विद्या नही, जिसकी उच्च शिक्षा विद्यालय न देता हो। ऐसे ही संसारका शायद ही कोई कोना होगा, जहाँ नालन्दाका छात्र न हो।

---

१३

# शासन-प्रणाली

नालन्दामें रहते हुए और कामोंके साथ मैंने उचित समझा, कि आजकलकी शासन-प्रणालीका भी ज्ञान प्राप्त करूँ। इस कार्यमें उपाध्याय विश्वामित्रने बळी सहायता की। अब-तकके वर्णनसे यह मालूम ही हुआ होगा, कि भूमंडलमें सभी जगह अब समताका राज्य है। धर्मके नामपर, ब्राह्मण-राजपूत-शेख-सय्यद जातियोंके नामपर, धन और प्रभुताके नामपर, गोरे और कालेके नामपर, जो अत्याचार पहले होते थे, कितनी ही मानव-सन्तानें दूसरोंके पैरोंके नीचे आजन्म कुचली जाती रहती थीं, उन सबका अब नाम नहीं। अब मनुष्य-मनुष्य बराबर हैं, स्त्री-पुरुष बराबर हैं। सभी जगह श्रम और भोगका समत्व मूल-मंत्र रखा गया है। न अब

भूमंडलमें जमींदार हैं; न सेठ-साहूकार हैं; न राजा हैं, न प्रजा; न धनी हैं, न निर्धन; न ऊँच हैं, न नीच। सारे भूमडलके निवासियोंका एक कुटुम्ब है। पृथ्वीकी सभी स्थावर-जंगम सम्पत्ति उसी कुटुम्बकी सम्पत्ति है। दैनिक आवश्यकताओकी पूर्तिके लिए जिन-जिन पदार्थोंकी आवश्यकता है, उनके उत्पादन और संग्रहके लिए अपनी-अपनी योग्यतानुसार सभी सचेष्ट होते हैं। श्रम कम और उत्पत्ति अधिक होनेके लिए कार्यों और श्रमोंके बहुत-से विभाग कर दिये गये हैं। बीसवी शताब्दीके लोगोको आजकलका विभाग विचित्र-सा मालूम होता। अब तो जीवनकी एक भी आवश्यक वस्तु शायद ही एक कोई गाँव, बिना दूसरेकी सहायताके, उत्पन्न करता हो। जहाँ पहलेका एक ग्राम अनेक प्रकारके अनाज, साग-तरकारियोंके अतिरिक्त कितने ही छोटे-छोटे शिल्पोका भी व्यवसाय करता था, वहाँ आजका यह विचित्र गाँव है, जो आकार, संख्या और खर्चमें उससे कई गुना बळा होने पर भी एक भी चीज पूरे तौरसे पैदा नही करता। यदि गेहूँ पैदा करता है, तो आटा दूसरी जगह पीसा जाता है; यदि ऊख पैदा करता है, तो चीनी दूसरी जगह बनती है; यदि दूध पैदा करता है, तो घास-दाना दूसरी जगहसे मँगाता है; यदि सिलाई करता है, तो कपळा दूसरी जगहसे मँगाना होता है। मशीनोंकी ढलाई-सुधराई तो और दूसरी जगह पहले भी होती थी। आज-कलका सारा मनुष्य-समाज जिस प्रकारकी जीवन-सामग्रियोंसे परिपूर्ण है, उन सबके लिए यदि ऐसा न किया जाता, तो बहुत समयकी आवश्यकता होती। आज जिस प्रकार कुल चार घंटे काम करके ही मनुष्य सारी आवश्यकताओंको प्राप्त कर बाकी बीस घंटे जीवनके अन्य

आनन्दोंके उपभोगमें लगाता है, वैसा वह कब कर सकता था? यंत्रोंका न उपयोग करते, तो इतना प्राप्त करना असम्भव था, चाहे सारा भी समय उसीके लिए क्यो न समर्पण करना पळता। यंत्रोंके उपयोगको भी अधिक लाभदायक बनानेके लिए यह श्रम-विभाग उपयुक्त सिद्ध हुआ है। ऐसे पहले भी श्रम-विभाग कुछ तो हुआ ही था, किन्तु आजकलके लोगोंने इस सूत्रको और भी विस्तृत अर्थमें प्रयोग किया है।

पहले शासनोंमें रचनात्मक कार्योंकी अपेक्षा ध्वंसात्मक कार्योंहीकी मात्रा अधिक थी। जब कभी लळाई छिळ जाती थी, तब तो मानो इसका ज्वालामुखी फूट निकलता था।

इस विषयमें और कहनेसे पूर्व उचित प्रतीत होता है, कि वर्तमान शासन-व्यवस्थाके ढाँचेका कुछ जिक्र कर दिया जाय। सारे भूमंडलकी शासन-व्यवस्थाका मूल-ढाँचा ग्रामकी शासन-व्यवस्थाको समझिये। ग्राम-शासन-सभा—या जिसे संक्षेपमें ग्राम-सभा कहते हैं—में अपनी जन-संख्याके अनुसार सैकळे पीछे एक पंच चुननेका अधिकार है। यदि किसी गाँवमें पाँच हजार आदमी है, तो वहाँकी ग्राम-सभाके पचास सभासद् होंगे। इस चुनावमें सम्मति देने तथा खळा होनेके लिए उस ग्रामके प्रत्येक नर-नारी समान भावसे योग्य हैं, यदि कोई मानसिक अथवा शारीरिक असमर्थता इसमें बाधक न हो। यह सभासद् फिर अपना सभापति या ग्रामणी, तथा × × × × सोलह सभासदोंकी कार्य-कारिणी समिति बनाते हैं। × × × × × × × × × × × × × इसी कार्य-कारिणीके हाथमें ग्रामकी आवश्यकता

और उत्पत्तिके देख-रेख तथा प्रबन्धका भार रहता है। पहले एक बार कहा जा चुका है, कि ग्रामकी प्रत्येक श्रेणीका एक नायक होता है। यह नायक सौ परिवारो-द्वारा चुना जाता है, जिनमें अधिक-से-अधिक दो सौ व्यक्ति हो सकते है। दो सौसे कम इसलिए हो सकते हैं, कि शायद कुछ पुरुष-स्त्री अविवाहित हो। ग्राम-कार्य-कारिणी समिति इन नायकोसे अपना बहुत-सा कार्य कराती है। शान्ति-भग तथा अन्य आवश्यक समयमें यो तो सभीका कार्य शासन-सभाकी सहायता करना है, किन्तु इन नायकोका उस समय यह प्रधान कर्तव्य होता है। पूर्व-कालकी पुलिसका कार्य इन्हीके द्वारा लिया जाता है। किसी कार्यके कारण अनुपस्थित होनेपर इनके स्थानपर ग्रामम सहायक नायक कार्य करते है। ग्रामके सभी व्यक्तियो-को भिन्न-भिन्न कार्यपर नियुक्त करना ग्राम-सभाकी सम्मति-अनुसार कार्य-कारिणीका काम है। यह आवश्यकतानुसार वैद्य, धाय, पुस्तका-ध्यक्ष, भोजनाध्यक्ष, भण्डारी आदि सभी विभागोके प्रमुखोको नियुक्त करती है। ग्राम-सभाके एक बारके चुने सभासदोकी अवधि अधिक-से-अधिक तीन वर्ष है। यही अवधि यहांसे सार्वभौम सभाके सभासदो तककी है। किन्तु शिक्षा-सम्बन्धी सस्थाओके लिए चुने गये व्यक्तियोके लिए यह नियम लागू नही है। इस प्रकार किसी शिक्षकको आजन्म अपने पदपर रहनेका अधिकार है, यदि उसने जनताकी दृष्टिमें कोई अक्षम्य अपराध न किया हो।

ग्रामोके बाद बहुत-से ग्रामोंको मिलाकर पहले तहसील या सब-डिवीजन सभायें तथा कही-कही थाना सभायें थीं। किन्तु उनके टूटे सौ

वर्षोंसे ऊपर हो गये। ग्रामोंके सुन्दर प्रबन्ध, बिजलीकी सवारी-गाळियों तथा टेलीफोनोंका प्रति ग्राममें उत्तम प्रबन्ध होनेसे वस्तुतः जिलाकी दूरी अब तहसीलहीके बराबर रह गई है। जिस प्रकार प्रत्येक सौ आदमियोंपर एक आदमी ग्राम-सभाका सभासद चुना जाता है, वैसे ही बीस हजारपर एक आदमी जिला-शासन-सभाका सभासद् चुना जाता है। जैसे पटना जिलामें दस लाख आदमी रहते हैं और यहांकी शासन-सभामें पचास सभासद् हैं। प्रत्येक पाँच सभासद्पर कार्य-कारिणीका एक सभासद् चुना जाता है। इस प्रकार पटना जिलाकी कार्य-कारिणीके दस सभासद हैं जिनके हाथमें क्रमशः निम्न दस विभाग हैं—

१—शिक्षा;

२—स्वास्थ्य, जन-सख्या-सावधीकरण;

३—शान्ति-व्यवस्था, न्याय;

४—अर्थ;

५—दूसरे जिलो तथा स्थानोंसे लेन-देन;

६—कृषि, शिल्प-व्यवसाय;

७—यंत्र-गृहादि-निर्माण और सुधार,

८—डाक, तार, रेल, विमान;

९—पुरातत्त्व-इतिहास-संरक्षण;

१०—प्रेस।

चुनाव होनेसे पहले जिलाकी ग्राम-सभायें तथा जन-साधारण-द्वारा उम्मेदवारोंके नाम आते हैं, जिन्हें जन-साधारणकी अभिज्ञता और विचारके

लिए चुनाव-तिथिसे पूर्व ही प्रकाशित कर दिया जाता है। पीछे उनके विषयमें प्रत्येक ग्राममें एक ही दिन, एक ही समय वोट लिया जाता है; फिर बहु-सम्मतिसे निर्वाचित पुरुषों तथा स्त्रियोंका नाम प्रकाशित कर दिया जाता है। किसी प्रकार अयोग्य सिद्ध होनेपर उस सभासद्को स्थानसे च्युत करनेका अधिकार उसके निर्वाचकोंको है। एक सभासद्के निर्वाचनका हल्का पृथक्-पृथक् होता है। पटनामें ऐसे-ऐसे पचास हल्के हैं। जिलेका जिस जगह सदर रहता है, वहाँके लोगोंका प्रधान काम जिला-शासन-सम्बन्धी कार्योंका करना है। लिखने-छापने आदिका काम, पुराने कागज-पत्रोंको सुरक्षित रखनेका काम, शासनके अनेक विभागोंके काम, सभी वहीपर होते हैं। यद्यपि प्रति तीसरे वर्ष जिला-शासन-सभाके सभासदोंका परिवर्तन हो जाता है, किन्तु भिन्न-भिन्न विभागोंके दफ़्तरोंके कार्यकर्त्ता, तथा अन्य कार्य-निर्वाहक पूर्ववत् ही बने रहते हैं। कार्य-कारिणीके सभासद् अपनी अवधि भर जिलाके प्रधान स्थानपर निवास करते हैं।

जिलाके विभागोंमें प्रथम, द्वितीयका कार्य तो नामहीसे स्पष्ट है। शान्ति-व्यवस्था-न्याय-विभाग शान्ति-स्थापन, अदालत और अपराधियोंको उचित दंड और सुधारका काम करता है। किसीकी व्यक्तिगत कोई सम्पत्ति न होनेसे अब तो दीवानीका शब्द ही उठ गया है। इसलिए कचहरी कहनेसे सिर्फ फौजदारी कचहरी ही समझना चाहिए। जैसे संसारसे और दूकानें उठ गईं, वैसे ही गवर्नमेंटकी स्टाम्पफरोशी, अमलोंकी पान-सुपाळी, वकीलों-का मिहनताना भी उठ गया। उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दीके इस प्रतिष्ठित पेशेका तो एक दम ही पता नहीं है। अदालतका कमरा खुला हाल होता

है, जिसमें न्यूनातिन्यून दो विद्वान वृद्ध अनुभवी जज बैठते हैं। प्रत्येक अभियोग अपने ग्रामकी न्याय-पचायत—जो ग्राम-सभा-द्वारा संगठित की गई एक समिति होती है—से होकर आता है, जिसमें या तो ग्राम-सभा अपना फैसला दे दिये रहती है, या आरम्भिक अनुसन्धानके बाद जिलाकी अदालतमे भेज देती है। वादी, प्रतिवादी गवाह सभी होते हैं। न्यायाधीश स्वयं हर बातकी गहराई तक पहुँचनेका प्रयत्न करते हैं। अभियोगोंकी संख्या बहुत ही कम होती है, इसलिए कचहरियोकी चहल-पहल नही है। मुकदमें अपमान, मार-पीट अथवा खून इन्ही तीन दफाओंमें खतम हो जाते है। फाँसी या प्राण-दडकी सजाही अब एकदम उठा दी गई है, उसके स्थान पर अपराधियोको किसी टापूमें मनुष्य-समाजके आनन्दसे वञ्चित करके रखा जाता है, जहाँ उसके भली प्रकार इलाज, शिक्षण आदिका प्रबन्ध होता है। किन्तु जब यह सिद्ध हो जाता है कि अब उसके स्वभावमें परिवर्तन हो गया, अब वह समाजके लिए खतरनाक नही है, तो फिर उसे छोळ दिया जाता है। दूसरे अपराधोके बन्दियोके लिए प्रत्येक प्रान्तको एक जेल रखना पळता है, जहाँ उन्हें रखकर सुधारा जाता है।

पाँचवें विभाग-द्वारा जिलामें उत्पन्न वस्तुयें आवश्यकतावाले बाहरी स्थानोंमें भेजी जाती हैं, और दूसरे जिला तथा प्रान्त आदिसे आवश्यक वस्तुयें मँगाई जाती हैं। यह मानों जिलाके भीतर और बाहर वस्तुओंके बदलनेका द्वार है। बाकी दूसरे विभाग नामहीसे स्पष्ट हैं।

कई जिलोंके ऊपर प्रान्तीय शासन-सभा होती है। प्रत्येक दो लाख मनुष्योंपर इसका एक सभासद् चुना जाता है। निर्वाचनसे पूर्व नामजद

करनेका तरीका नीचेसे ऊपर तक एक-सा ही है। बिहारमें दो करोळ स्त्री-पुरुष सम्मति देनेवाले है। इस प्रकार प्रान्तीय सभामें यहाँके एक सौ सभासद है। इसकी कार्य-कारिणीम भी पूर्ववत् दस विभागोके दस सभासद् या मत्री है। इनके कार्य भी पूर्ववत् ही है, किन्तु क्षेत्र विस्तृत है। प्रान्तका न्यायालय अपीलका अन्तिम स्थान है। यहाँ भी कार्य-कारिणीके सभासदो तथा सभापतिका प्रान्तके मुख्य स्थानम अपनी अवधि भर रहनेका नियम है। अन्य सभासद् केवल सभाकी बैठकोके समयमें ही आते है।

प्रान्तोके ऊपर देश-सभा है। इसके लिए प्रति दस लक्ष एक प्रतिनिधि चुना जाता है। भारतम इस समय बीस करोळ सम्मति-दाता स्त्री-पुरुष रहते है, बाकी पाँच करोळ बीस वषसे कम तथा विद्यार्थी-अवस्थामें है। भारत-शासनकी कार्य-कारिणीमे भी वैसे ही दस आदमी कार्य-कारिणीके सभासद् होते है, जिन्हे अवधि-भर दिल्लीहीम रहना होता है। किन्तु दो शताब्दी पूर्वके समान शिमला-निवास इन बेचारोके भाग्यमे नही है। विभाग पूर्ववत् ही है, कार्य-क्षेत्र विस्तृत है।

इसके ऊपर सार्वभौम सभा है, जिसके लिए पचास लाखपर एक सभासद चुना जाता है। इस समय भूमडलकी मनुष्य-गणना एक अरब अट्ठासी करोळ है, जिसमे अळतीस करोळ तो विद्यार्थी आदि है, बाकी डेढ अरब स्त्री-पुरुष सम्मतिदाता है। सार्वभौम सभाके तीन सौ सभा-सदोमेंसे चालीस भारत भेजता है। सार्वभौमकी कार्य-कारिणीमे पन्द्रह सचिव है। सार्वभौम सभाके सभापतिको राष्ट्रपति कहते है। सार्वभौम सभाका स्थान दक्षिणी अमेरिकाके ब्राजील देशकी नारग नदीके किनारे ठीक भूमध्य-रेखापर

है। यहाँहीकी अक्षांश-रेखा शून्य मानी जाती है। इस नगरका नाम सार्व-भौम नगर है। इसे बसे आज सौ वर्ष हो गये। जिस दिन सार्वभौम शासन स्थापित हुआ, उसी दिन एक सार्वभौम संवत् भी चलाया गया। आजकल सम्वत् १०१ चल रहा है। सार्वभौम सभाके सभासदोंकी यात्रा वायुयानों द्वारा हुआ करती है। राष्ट्र-पति तथा कार्य-कारिणीके सभासद् अथवा सचिव अपनी अवधि भर सार्वभौम नगरमें रहते है। सार्वभौम सभाकी कार्यवाही सार्वभौमी भाषामें होती है। सार्वभौम नगरमें पचास सहस्र स्त्री-पुरुष रहते हैं। इनमें सभी देशोंके आदमी हैं, जो सभी भिन्न-भिन्न विभागोंके दफ्तरों तथा अन्य कार्योंमें नियुक्त हैं। सार्वभौम सचिवोंके हाथमें निम्न विभाग है—

१—शिक्षा
२—स्वास्थ्य
३—शान्ति-व्यवस्था
४—अर्थ
५—लेन-देन, परिवर्त्तन
६—कृषि
७—शिल्प-व्यवसाय
८—यंत्र
९—गृह-पथ-निर्माण आदि
१०—डाक-तार
११—यान-विमान

१२—मुद्रण

१३—जन-संख्या-नियंत्रण

१४—पुरातत्त्व-संग्रहालय

१५—रेकर्ड-इतिहास

मनुष्य-गणनाको अधिक बढ़ने न देनेका पिछली दो शताब्दियोंमें बहुत प्रयत्न हुआ है और उसमे पूर्ण सफलता हुई है। इस विभागका सम्बन्ध ऊपरसे ग्राम तक है। प्रत्येक दसवें साल मनुष्य-गणना तो होती ही है, इसके अतिरिक्त, जहाँ दो माससे ऊपरका गर्भ हुआ, उसकी सूचना और गणना भी इस विभाग-द्वारा बराबर पत्रोमे निकलती रहती है। दो उद्देश्योको लेकर यह विभाग कायम हुआ था, जन-सख्याकी वृद्धिको रोकना, और चिर-रोगी, राजरोगी-द्वारा सन्तान न उत्पन्न होने देना। दोनो ही उद्देश्योंको इसने पूर्ण किया है। आजकल जो एक भी कुष्ट, मृगी, उपदंश, बवासीर आदि रोगोवाले आदमी नही मिलते, उसका कारण उक्त प्रयत्न ही है। ऐसी छूतकी बीमारियोवाले रोगियोको साधारण जन-समाजसे पहले अलग करके आरामके साथ रखने तथा उनकी चिकित्साका भी पूर्ण प्रबन्ध किया जाता है। इस प्रकार उन्हे अपने संसर्गसे रोग फैलाने-का मौका नही दिया जाता। दूसरे, आगे सन्तान न हो, इसके लिए उनकी जनन-शक्तिको विशेष निर्धारित उपायोंसे नष्ट कर दिया जाता है। इस प्रकार मनुष्य-जातिके चिर-शत्रु इन बीमारियोंका उन्मूलन किया गया है। इतनेपर भी देखा गया, कि यदि कोई रुकावट न डाली गई, तो मनुष्य-संख्या बेतहाशा बढ़ती ही जा रही है। विशेषज्ञोंकी सम्मितिमें पृथ्वीकी

औसत वार्षिक आमदनी निकाल बतलाई। मालूम हुआ, इससे पौने दो अरब से कुछ ही अधिक आदमी सानंद जीवन व्यतीत कर सकेंगे। फिर क्या था? यह भी हिसाबसे मालूम हो गया कि इतनी पैदाइशमें इतने तो मरनेवालोंकी जगह पूरा करते हैं, बाकी इतने केवल वृद्धि करते हैं। यदि प्रत्येक विवाहित दम्पति दो या तीन सन्तान ही उत्पन्न करें, तो यह वृद्धि रोकी जा सकती है। इसपर फिर वही जनन-शक्ति नाश करनेकी प्रक्रियाका प्रयोग किया गया। प्रत्येक स्त्री-पुरुषके बुढापेके आरामका जिम्मा तो अब राष्ट्रपर है, इसलिए सन्तान उत्पन्न करनेकी बळी लालसा तो ऐसे भी कम हो गई है। और उक्त प्रक्रियासे केवल जनन-शक्ति मात्रहीका ह्रास होता है, बाकी सब तो पूर्ववत् ही रहता है। इसलिए इसे लोग स्वयं पसन्द करते हैं। पहले अनेक पुरुष इसके विरोधी थे। उनका कहना था कि वृद्धि तो अवश्य रोकी जानी चाहिये, किन्तु कृत्रिम उपायसे नहीं, संयम-नियमसे। दूसरे विचारवालोंका कहना था कि यह संयम इतना सरल कार्य नहीं, जिसे राष्ट्रके सभी जन पालन कर सकें। जब यह बात है, तो इसपर ढील देना एक प्रकारसे जनवृद्धिको ही पुष्ट करना है। राष्ट्र इस मृगतृष्णाके भरोसे अपनी आवश्यकताको पूर्ण करनेसे नहीं रुका रह सकता। अस्तु। इसका फल अब यह हो गया है, कि और कामोंकी भाँति जन-संख्याका घटाना-बढ़ाना भी राष्ट्र-कर्णधारोंके हाथमें वैसेही है, जैसे किसी बिजली-बत्तीका जलाना और बुझाना।

---

## १४

# नालन्दासे प्रस्थान

नालन्दामें पूरे एक पखवारे तक निवास करनेके बाद मैंने अपनी अगली यात्रा आरम्भ की। विश्वामित्रको वर्तमान और भूत जगत्का पूर्ण परिचय था, और वह मेरे भी पूर्ण परिचित हो गये थे। इसलिए मैंने अपनी यात्रामें उन्हें ही साथी चुना। उन्होंने भी बळी प्रसन्नता-पूर्वक इसे स्वीकार किया। आते समय यद्यपि पटना पळा था; किन्तु रात्रिका समय था, हमलोग वहाँ उतर न सकते थे, इसलिए उसके बारेमें कुछ न जान सके। अब अपनी यात्रामें नालन्दासे प्रथम पटना ही चलना निश्चित हुआ। यात्रा दिनमें की गई, इसलिए मार्गकी भूमिके दृश्य भी खूब दिखाई पळते थे। विश्वामित्र इधरके गाँव-गाँवसे परिचित थे। वह बीच-बीचमें गाँवोंके बारेमें बहुत-कुछ बतलाते जाते थे। नालन्दा पटनासे साधारण ट्रेन-द्वारा दो घंटेका रास्ता है। रास्तेमें आमोंके बाग बहुत देखनेमें आये। मैंने विश्वामित्रसे

कहा, कि पटनाके मालदह आम पहले भी बहुत मशहूर थे। उन्होंने बतलाया, अब आकार और स्वाद, दोनोंमे और भी उन्नति हुई है। यहांके आम सुमेरु (उत्तरीय ध्रुव)से कुमेरु (दक्षिणीय ध्रुव) तक पृथ्वीमें चारो ओर भेजे जाते हैं। विदेह, मगध और अंग, बिहारके तीनों ही खंड संसारके आमो और लीचियोके बगीचे है। इनकी अधिक भूमि तथा निवासियोका अधिक अंश इन्हीकी खेतीमे लगा रहता है। तारीफ यह है, कि अब यह दोनों ही फल बारह मास तैयार होते रहते हैं, हर वक्त हजारों रेल-गाळियाँ इनसे लदी, बर्फसे सुरक्षित, एशिया और यूरोपके भिन्न-भिन्न भागोमें दौळती रहती हैं। रेलोंका जाल तो एकमें एक लगा, आस्ट्रेलिया तथा और द्वीप-समूहों को छोळ, सारे भूमंडलमें बिछा हुआ है। काठमाण्डव (नेपाल), दार्जिलिंग और सदिया इन तीनों रास्तोंसे हिमालयको पारकर रेल तिब्बत-में घुसी है। तिब्बतमें बहुत दूर तक रेल है। अब तिब्बती लोगोमें वह मलिनता नही रही। वह क्या, अब तो भूमंडलका कोई भी मनुष्य-पुत्र स्वच्छता, सभ्यताके मानव-गुणोंसे बंचित नही है। सभीके लिए शिक्षा और सुख-सामग्री बराबर वितरण की जाती है। तिब्बतसे मंगोलियामें तांता बिछाती रेलवे लाईन अल्ताई पर्वतको पारकर साइबेरिया पहुँच जाती है। मंगोलियासे मंचूरिया और चीनके भिन्न-भिन्न प्रदेशोमें रेले गई हैं और फिर युन्-नान् होती यनाम, स्याम और बर्मामें फैल गई है। बर्माका सम्बन्ध फिर रेलोंसे चटगाँव और आसाम प्रान्तसे हो गया है। यही नहीं, बर्मासे मलाया होते समुद्रमें सुरंगसे सिंगापुर और सुमात्राको भी मिला दिया गया है।

तिब्बतसे पश्चिमकी ओर तुर्किस्तानके यारकन्द, काशगर होती ताशकन्द, समरकन्द, फिर अफगानिस्तान, ईरान, तुर्की और अरबमें रेलोंका जाल बिछा है। यूराल पर्वतको कितने ही स्थानोंपर पारकर रेलें रूसमें घुसी हैं। इधर कुस्तुन्तुनियामें समुद्रपर पुल बाँध, एसिया और यूरोप मिला दिये गये हैं। फ्रांस और इंग्लैण्डके बीचमें भी समुद्रमें सुरंगवाली रेल-लाइनें बिछी हैं। स्वेज नहरकी सुरंगवाली रेलसे एशिया-अफ्रीका जोळ दिये गये हैं। अफ्रीकामें भी सब जगह रेलोंका जाल है। इधर पिछली शताब्दियोंमें 'सहाराकी' बालुकामय भूमिको अपार जल-राशिसे भरकर एक समुद्र तथा उसके आस-पास लाखों मीलकी मरुभूमिको हरी-भरी कर देना एक बळा आश्चर्यमय कार्य हुआ है। अफ्रीकाकी जन-संख्या भी पहलेसे बहुत बढ़ गई है। आधा यूरोप वहाँ पहुँच गया है, इसके अतिरिक्त एशियाके भी बहुतसे आदमी वहाँ चले गये हैं। किन्तु अब वह पुराना वर्ण-भेद और देश-भेद नहीं। सब एक कुटुम्बकी भाँति रहते हैं। हब्शी, यूरोपियन, एशियाई सभी शिक्षा-दीक्षा आदिमें समान हैं और रंग आदिमें भी समान होते जा रहे हैं।

इस प्रकार तो रेल-मार्ग पूर्वीय गोलार्द्धमें बिछा हुआ है। साइबेरियासे बेरिंग समुद्र-स्रोतको सुरंग-द्वारा पार करती हुई गाळी उत्तरीय अमेरिकाके अलास्का प्रान्तमें पहुँच जाती है। फिर तो कनाडा, संयुक्त राष्ट्र, मेक्सिको होती, पनामा नहरको सुरंगसे पार करती हुई गाळियाँ दक्षिण अमेरिकामें घुस जाती हैं, और कोलम्बिया, पेरू, ब्राजील, बोलिविया, चिली, अर्जेण्टाइन, उरुगाय, पटगोनिया आदि सभी खंडोंमें फैली हुई हैं।

यद्यपि इस प्रकार पृथ्वीका अधिक भाग क्या, आस्ट्रेलिया और अन्य छोटे टापुओं तथा जापानको छोळ सभी भू-प्रदेश रेलोंसे जोळ दिया गया है, किन्तु आसानीके साथ जहाज भी चीजोंके पहुँचानेमें बळा काम करते हैं। इनके अतिरिक्त दूर-दूरकी यात्रायें वायुयानों ही द्वारा होती हैं। मुख्य उत्तरीय और दक्षिणीय ध्रुवोंपर बस्ती हो गई है, जहाँ गर्मी या छः महीने वाले दिनमें लोग रहते हैं। ज्योतिष-शास्त्रके विशेषज्ञ तथा भौतिक तत्त्व-वेत्ता वहाँ अधिक जुटते है। यात्रा वायुयान-द्वारा होती है। आजकलके लोग स्काटके आत्म-बलिदानकी कथाये भले ही पढ़ लें, किन्तु क्या उस समयकी कठिनाइयोंका ठीक अनुमान वे कर सकते है?

बिहार और पटनाकी यात्रा करते, बीचमें प्रसंग-वश यह भी बातें आ गईं। इसके कारण बिहारके आम और लीची ही हैं। इन लगातार आम और लीचीके बागोंमें गुजरते हमलोग आखिर पटना पहुँच ही गये। सूचना पहलेसे पहुँच गई थी। बिहार-शासन-सभाके सभापति साथी यूसुफ कतिपय अन्य सभासदोंके साथ स्टेशनहीपर स्वागतके लिए आये थे। स्वागतके बारेमें एक ही बार लिख देना चाहता हूँ कि प्रत्येक स्थानवालोंने एक दूसरेसे बाजी ले जानेका प्रयत्न किया। जब मैंने नगर देखा तो मालूम हुआ कि पाटलीपुत्र तो अलग रहा पटनाका भी वह पूर्ववाला आकार बिल्कुल उलट-पलट गया है। सारे पटना शहरमें केवल पन्द्रह हजार आदमी रहते हैं। अब उन तंग गलियों और सळकोंका नाम-निशान नहीं, न उन चौतल्ले-तितल्ले मकानोंहीका कुछ पता है। सभी रहनेके मकान ग्रामोंकी तरह हैं। फुलवाळी और वृक्षोंका भी वैसा ही शौक है। इससे जिस जगह, पहले हजार

आदमी रहते थे, अब मुश्किलसे पचाससे सौ आदमी तक रहते हैं। पटना बिहार-प्रान्तका सदर है। यहाँ बहुतसे राष्ट्रीय दफ्तर हैं। छापाखाना बहुत भारी है। बिना-तारके-तारका बळा स्टेशन है। वायुयानोंका भी बळा अड्डा है। यहाँके सभी निवासियोंका प्रधान काम इन्हीं विभागोंमें काम करना है।

यद्यपि रहनेके घर सभी एक-महले हैं; तो भी दफ्तर कई-कई तलों वाले हैं। कागज-पत्रोंका जो रेकर्ड-आफिस है, वह तो पूरे पचास तलोंका है। नीचेसे सबसे ऊपरवाले तलपर पहुँचना परिश्रमका काम है, इसीलिए यहाँ वही बिजलीका झूलाडोल ऊपर-नीचे जानेके लिए है। इस कार्यालयमें प्रान्तका प्रत्येक कागज बळे यत्नसे रखा गया है। कागजोंको आग आदिसे बचानेका पूरा प्रबन्ध है। इस दफ्तरमें बिहार-सम्बन्धी अंग्रेजी शासनहीके कागज नहीं, मुसलमानकालकी भी बहुत-सी सनद आदि इकट्ठी की गई हैं। पटनाकी सबसे सुन्दर इमारत अशोक-भवन है। इसका नक्शा नालन्दाके वसुबन्धु-भवनहीका-सा है, किन्तु इसकी शोभा उससे और अधिक है। इसमें सोने और संगमर्मरका काम खूब देखनेमें आता है। विस्तार भी इसका 'वसुबन्धु-भवन' के इतना ही है। रंग-मंचके ऊपर बळे-बळे स्वर्णाक्षरोंमें लिखा है, 'एषे च मुख मुते विजये देवनं प्रियस यो ध्रम विजयो।'

## १५

# भारतके प्रान्त

पटनासे चलकर, यद्यपि मैने वर्तमान भारतके सभी प्रान्तोंमें दो-दो, चार-चार दिन दिये, किन्तु सभी जगहोकी बस्ती, रहन-सहन एक-सा ही देखा। यद्यपि मै रोज अपने रोजनामचेमें अपने आस-पासकी चीजोंके विषयमें लिखता गया हूँ, किन्तु, यहाँ उसका उद्धरण करना पुनरुक्त मात्र समझ छोळ देता हूँ। अपनी यात्रा-क्रमसे, केवल सर्सरी तौरसे मोटे-मोटे परिवर्त्तनोहीका, संक्षिप्त विवरण देता हूँ।

पटनाके साथ ही बिहार प्रान्तको छोळ, मैं काशि-कोसल प्रान्तके बनारसमें गया। और परिवर्त्तनोंके साथ बनारसने भी बळा परिवर्त्तन खाया है। न वह काशीकरवटकी करवट है; न कचौळी-गली, न उसकी कचौळी।

गलियोंका तो एकदम नाम ही नही है। बळी चौळी-चौळी सळकें हैं। खुली हवादार जगहोंमें वही मकानोंकी शोभा है, जो पहले बतलाई जा चुकी है। यदि आज कोई आदमी बीसवी शताब्दीके किसी मकानको ढूँढ़ना चाहे, तो नही मिल सकता। मुझे और भी उदासी मालूम हुई, जब मणिकर्णिका, दशाश्वमेध आदि पूर्वके गुजान घाटोपर गया। यद्यपि स्नानके अवसरपर अब भी बहुत-से स्नान करनेवाले आते है, सीढियाँ पहलेसे भी सुन्दर और साफ है, बिजलीकी ताकतसे चलनेवाली कुछ नावे भी गगामे सपाटे मारती दिखाई पळती है, किन्तु अब वह घाटियो और पण्डोकी चहल-पहल कहाँ ? अब वह 'गुरु'-'गुरु'की कहनाई और कुडी-सोटेकी रगळाई कहाँ ? नाइयो और मालियोका भी पता नही। पता कैसे हो, इस समय तो जब पैसादेवहीका पता नही, तो उनके अनुचरोका ठिकाना कहाँ ? न अब दशाश्वमेधकी सट्टी है, न विशेश्वरगजका गोला, न साँळो-मुष्टडोका पता। न अब तत्कालीन समाज-की-मारी हतभागिनी स्त्रियोके दालमडीके कोठे। लोगोके रहनेके मकान वही एक-महले। ऐतिहासिक स्थानोके चारो ओर खूब हरी-हरी खुली जगह दिखलाई पळती है। मदिरोको अब एक ऐतिहासिक चिन्ह समझ सुरक्षित रक्खा गया है। रुपये-पैसोका तो चढ़ावा सम्हालना नही है। सारे बनारसमे इस समय केवल पचीस सहस्र नर-नारी निवास करते है, जो यदि पुराने मकान होते, तो एक कोनेहीमें आ जाते, किन्तु चौळी सळको और एक-महले मकानो और फूलो आदिके कारण पुराने बनारस-भरमें फैले हुए हैं।

बनारसके पास दो और प्रसिद्ध बस्तियाँ है, एक तो बँगला उस पारु

तीन कोसपर 'ऋषिपतन मृगदाव'—जिसे पहले सारनाथ कहा करते थे—दस हजार आदमियोंकी बस्ती है। यहाँ अतिथि-विश्राम बहुत दूर तक बने हैं। बुद्धिवादी बुद्धके सर्व-प्रथम यही उपदेश करनेसे इसका माहात्म्य भारी है। सारे भूमंडलके नर-नारी यहाँ आते हैं। स्थान अब बहुत रमणीय हो गया है। पुराने ध्वस्तप्राय स्तूप बिल्कुल अब नये हो गये हैं। दूसरा स्थान है अस्सी उस पार काशी विश्व-विद्यालय। पहलेसे बहुत दूर तक इसका विस्तार है। अब पुरानी पाठशालायें तथा पंडितोंकी गृह-पाठशालायें तो हैं नहीं, किन्तु इससे विद्याप्रचारमें कोई कमी नहीं है। सभी विद्याओंका अध्ययनाध्यापन पूर्वसे भी अधिक व्यवस्थित रूपमें काशी-विश्वविद्यालयमें होता है। इसकी गणना भूमडलके उच्च श्रेणीके विश्व-विद्यालयोंमें है। साहित्य और दर्शनमें उसकी बळी ख्याति है।

काशि-कोसल प्रान्तकी राजधानी प्रयाग है। गेहूँकी खेती तथा आम, अमरूद, बैरके बागोंकी यहाँ अधिकता है। खासकर बनारस जिलेमें उपरोक्त फल बहुत होते हैं।

इसके अतिरिक्त चीनी भी इस प्रान्तमें बहुत होती है। पहलेसे नहरें यहाँ बढ गई हैं, किन्तु आबादी घट गई है।

इन्द्रप्रस्थ। इसमें सूरसेन, कुरु, पांचाल, मत्स्य चार विभाग हैं। सूरसेन और मत्स्य कमिश्नरियोंमें बीसवीं शताब्दीकी अनेक रियासतें भी सम्मिलित हैं। अब उन रियासतोंका कुछ भी चिन्ह नहीं रहा। भारतकी राजधानी दिल्ली इस प्रान्तकी भी राजधानी है, किन्तु खास शहरमें पचास ही हजारकी बस्ती है। स्वच्छता-सुन्दरतामें बढ़ी-चढ़ी है। पुरानी इमारतें

खूब सुरक्षित अवस्थामें हैं। गेहूँ, चीनी, घी इस प्रान्तसे और जगहोंमें भी जाता है। तराईकी ओर कागजके बहुत-से ग्राम हैं।

पंजाब। कश्मीर भी इसीमें शामिल है। राजधानी लाहौर है। तक्षशिला विद्यालयने फिर अपनी प्राचीन कीर्तिको लौटा पाया है। आयुर्वेद-शास्त्रमें उसकी ख्याति सम्पूर्ण भूमंडलमें है। गेहूँ तथा और अनाज, एवं चीनीके अतिरिक्त यह प्रान्त मेवे बहुत पैदा करता है। उत्तर तरफ पर्वतीय जन-पदोंमें भेळोंके बहुत-से ग्राम है। ऊनी कपळोंके बहुत-से बळे-बळे कारखाने हैं। इसी ओर बिजली उत्पन्न करनेके भी बहुत-से स्थान हैं।

राजस्थान। इसमें पुराने राजपूतानेकी सारी रियासतोंके देश सम्मिलित है। सबसे भारी परिवर्त्तन, अनेक रियासतोंके एक होनेके अतिरिक्त, मरु-भूमिका हरे-भरे मैदानके रूपमें परिणत होना है। सिन्धकी बळी नहरने, बीकानेरके पानी बिना जलकर बालू हो गये कलेजेको ठढाकर, यह परिवर्त्तन किया है। अजमेर इस प्रान्तकी राजधानी है।

सिन्धु। पैदावार फल और अनाज दोनोंहीकी है। राजधानी करांची, जहाज और विमान दोनोका बळा अड्डा है। यहाँसे मैं गुजरात, मध्यप्रान्त और उत्तर महाराष्ट्रमें गया। तीनों प्रान्तोमें कपासकी खेती बहुत अधिक होती है। कपळोंके कई एक बळे-बळे कारखाने हैं। पुरानी हैदराबाद-रियासत, उत्तर महाराष्ट्र, दक्षिण महाराष्ट्र, कर्नाटक और आन्ध्र इन चार प्रान्तोंमें बँट गई है। इन प्रान्तोंमें भी कपास और कपळोंके कारखाने हैं। किन्तु चावल, चीनीकी पैदावार बहुत है। द्रविळ और केरलके अतिरिक्त लंका भी अब भारतहीमें सम्मिलित है। इनके अतिरिक्त उत्कल, बंग,

आसाम, बर्मा और हिमालय पांच प्रान्त और भारतके हैं। सभी जगहोंकी व्यवस्था-अवस्था बहुत ही सुन्दर है। निवासी आनन्दित तथा वसुन्धरा वसुन्धरा है। जगह-जगह बहुत-से विद्यालय और विश्वविद्यालय हैं।

---

१६

# वर्तमान जगत्से उठ गई चीजें

पहले किसी प्रकार भी धनी बननेकी बीमारीका बड़ा प्रकोप था। उस समय लोगोंको ऐसा करनेकी स्वाधीनता भी थी। उस समय किसी वस्तुका मूल्य राष्ट्रीय आवश्यकतापर निर्भर नहीं था। धनकी इच्छावाले धनिक इस बातकी कब परवाह करने लगे थे, कि अमुक व्यवसायसे देशका श्रम तथा जीवन बर्बाद होगा, या सार्थक? वह तो यह देखते थे कि बाजारमें माँग किस चीजकी है। बस, उसीकी तैयारीके लिए बड़े-बड़े कारखाने खोल देते थे, जिनमें लाखो आदमी काम करते थे। शराब, सिगरेट, अफीम यद्यपि हानिकारक वस्तुयें थीं, किन्तु उनकी उपजके लिए लाखों आदमी और लाखों बीघे भूमि बझी रहती थी। भला आजकल वह बात कहीं चल

सकती थी ? यहाँ तो सिद्धान्त ठहरा, जीवनकी सभी आवश्यक, अहानिकारक, आनन्दप्रद सामग्रीके यथेष्ट सग्रहमें जहाँ तक हो सके कम-से-कम समय लगाया जाय, ताकि अवशिष्ट समयको लोग अपनी इच्छानुसार, अपने ईप्सित और कार्योंमें लगा सकें। पहले जैसे दरभंगा और मुजफ्फरपुर जिलोकी बहुत भूमि तम्बाकू पैदा करनेमें लगी रहती थी, अब वहाँ तम्बाकू का नाम नही। सिगार, सिगरेट, बीड़ियोके कारखानोंका पता नहीं। शराब, अफीम ही नही, गाँजा, भाँग, चरस, ताळी आदि कितनी ही वस्तुयें आजके ससारमें पढ़कर तथा वस्तु-संग्रहालयोहीमें जाकर देखी जा सकती है। चाय, काफी, कहवा भी अब व्यर्थका व्यसन समझा जाकर विदा हो चुका है। खानेमें छोटे-बळे आदमीका भेद न होनेसे, साँवाँ, कोदो, मळुआ (रागी), मोटे चावल आदि कितने निम्न श्रेणीके अन्न नही बोये जाते। खानेके लिए फल, अनाज, जो कुछ भी पैदा किये जाते है, उत्तम श्रेणीके। कपळे-लत्ते, घर-द्वार, सवारी, बार-बरदारीमें भी यही बात है।

पैसेका नाम उठ जाने, तथा वैयक्तिक सम्पत्तिके न रह जानेसे फल-फूल, खेत-बारी, कल-कारखाना सब कुछ राष्ट्रीय है; और इसीलिए अब उतने कानूनोंकी भी भरमार नही। इन्कमटैक्सका कानून, बन्दोबस्त कानून, कोर्टफीस, आबकारी, काश्तकारी, लगान, ज्वाइंट-स्टाक-कम्पनी, आदि-आदि सैकळों कानूनोका अब कामही नहीं है। दीवानी मामलोंकी जळ ही खतम हो गई, क्योंकि धन-धरती किसी व्यक्तिकी है ही नहीं। फौजदारीके कानूनका आकार भी बहुत घट गया है, क्योंकि धन-धरतीके अपहरण-विषयक चोरी-डकैती आदि अपराध अब सम्भव ही नहीं। एक

व्यक्तिका दूसरे व्यक्तिको शारीरिक या मानसिक हानि पहुँचानेका कारण अब नाम-मात्र ही रह गया है, क्योंकि इन सबकी जळ वही व्यक्तिगत स्वामित्व था। शिक्षाका उत्तम प्रबन्ध, रोगोकी उत्कृष्ट चिकित्सा, नीरोग हृष्ट-पुष्ट माता-पिताकी वैसी सन्तान होना, इत्यादि वह कारण हैं, जिनसे, जिन कोनोंसे पहले कितने अपराध हो भी पळते, आज अपराध वहाँ नही या नहीके बराबर होते है। अब अपराधोंके दो ही मुख्य कारण है, मनुष्य-प्रकृतिकी जब तबकी उद्धतता और अज्ञानता, तथा स्त्री-पुरुषके सम्बन्ध। किन्तु इनसे भी पहलेकी अपेक्षा शताश भी अपराध नही हो पाते; कारण है—मनुष्य-प्रकृतिका बहुत भारी सुधार हो जाना, तथा स्त्री-पुरुषोका एकदम बराबर समझा जाना। आजकल स्त्रीपर पुरुषका उतना ही अधिकार है जितना पुरुषका स्त्रीपर। दोनो केवल प्रेमके बन्धनसे बँधे हैं। जिस प्रकार दाम्पत्य बन्धन प्रेमके ही द्वारा बँधा है, वैसेही वह तभी तक स्थिर भी समझा जाता है, जब तक कि वह प्रेम है। प्रेमके अभावमें इस बन्धनका सर्वथा उच्छेद हो जाता है। जब पति-पत्नीको एक-दूसरेकी आर्थिक पराधीनता नही, समाजके विरोधका भय नही, तो फिर वह कब और कितने दिनों तक दिखलावेके दम्पती बने रह सकते है? इसका एक यह भी फल हुआ है कि अब पहलेकी तरह गुप्त व्यभिचारकी अधिकता नही।

आजकलके संसारमें कितने ही पेशोंका भी अस्तित्व नहीं है। वकील, मुख्तार, सोख्तार, बैरिस्टर ही नही; मोची, भंगी, रंडी (वेश्या), भँळुये, भिखमंगे, पंडे, भाँट, मुजावर, कसाई, दूकानदार आदि भी अब नहीं रह

गये हैं। खिदमतगार, लौंडी, आका भी नहीं। बाल-विवाह, अनमेल विवाह का भी पता नहीं। तिलक-दहेज, नाच-तमाशा, बळी-बळी बारात, हाथी-घोळे-पालकी, आतिशबाजी, तमाशे आदि कुछ भी नहीं। देवताओं और पीरोंके हटकों, पूजा, बलिदान और कुर्बानियोंका भी निशान नही। जाति-भेद, रंग-भेद भी नहीं। पैतृक बीमारियाँ तथा राजरोग, कुष्ठ, दमा, बवासीर, पागलपन, राज-यक्ष्मा, उपदंश, आदि सुननेमें नही आते। इन बीमारियोंसे पिछली शताब्दीमें राष्ट्रको बहुत युद्ध करना पळा है, तब विजय मिली। ऐसे सब रोगियो (नर-नारी दोनों) को औषधादि प्रयोगसे सन्तानोत्पत्तिके अयोग्य बना दिया गया था, और उन्हे हटाकर पृथक् रक्खा गया था। यह काम बहुत कठिन था, और हुआ भी एकदम नही। किन्तु जब एक बार राष्ट्रने अपने हितकी बातको समझ उसे करनेकी ठान ली, तो भला वह काम हुए बिना कब रह सकता है? यह राष्ट्रहीके प्रयत्नका फल है, कि पृथ्वीपर अन्धे, लूले, लँगळे, बहरे, गूँगे, काने, बुद्धिशून्य तथा विकृत-इन्द्रिय व्यक्ति खोजे नही मिलते।